ISSN - 2583-3456

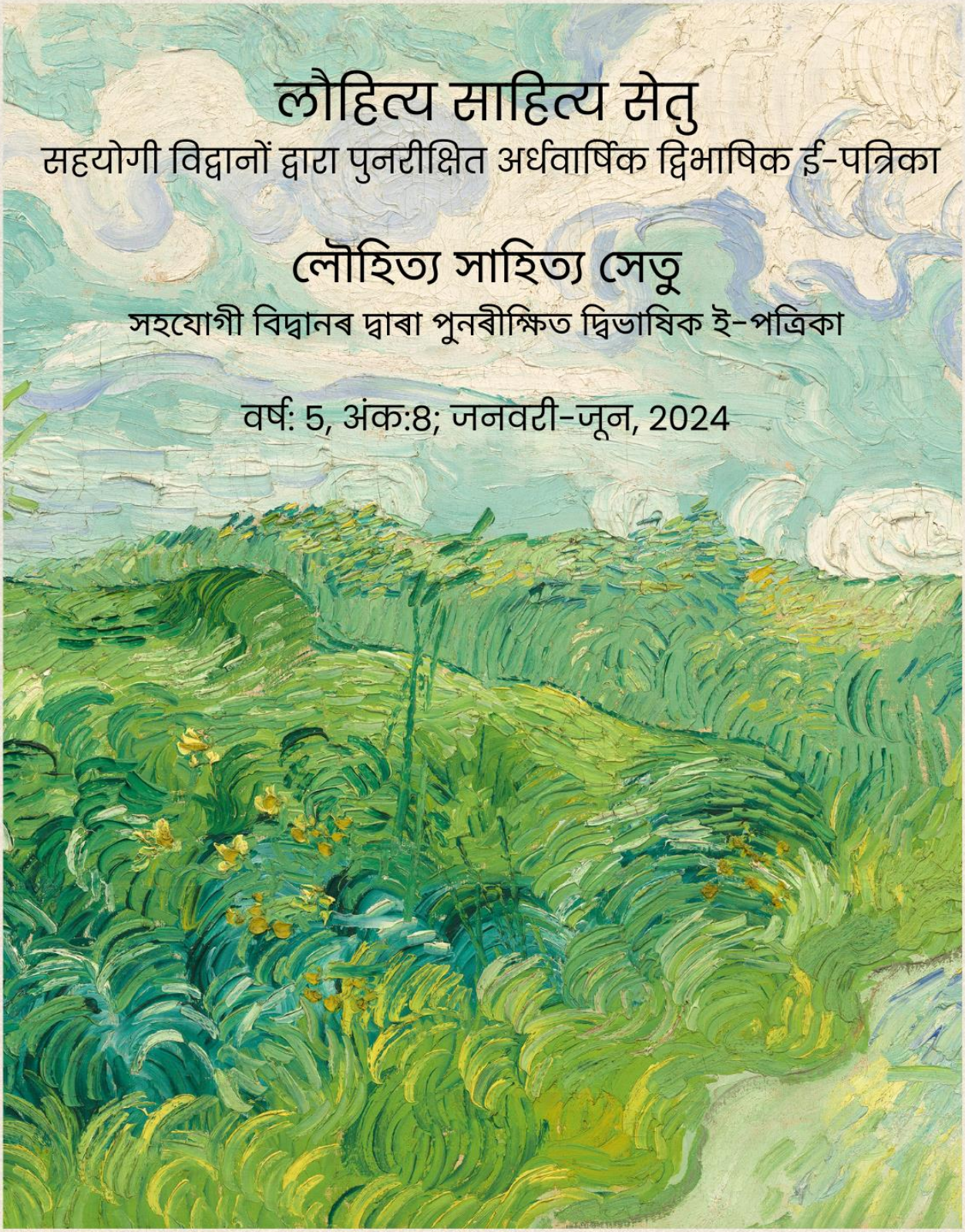

लौहित्य साहित्य सेतु

सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित अर्धवार्षिक द्विभाषिक ई-पत्रिका

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু

সহযোগী বিদ্বানৰ দ্বাৰা পুনৰীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

वर्ष: 5, अंक:8; जनवरी-जून, 2024

संपादक
पूजा बरुवा
डॉ. अनामिका राजबंशी

परामर्श मंडल

डॉ. किरण हजारिका
सम-कुलपति,

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, दिल्ली

kiranhazarika68@gmail.com

9859973647

प्रो. अमलेंदु चक्रवर्ती
कुलपति, रवींद्रनाथ ठाकुर विश्वविद्यालय,

नगाँव, असम

chakramal@gmail.com

9435346359

हाङमिजिहानसे
विशिष्ट असमीया एवं कार्बि साहित्यकार

hangmijihanse@gmail.com

9101275477

प्रो. बिभा भराली
अध्यापक, असमीया विभाग,

गौहाटी विश्वविद्यालय

bibha@gauhati.ac.in

डॉ. छाया भट्टाचार्य
सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष एवं सह-अध्यापक

हिन्दी विभाग

कॉटन विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, असम

chgoswam@gmail.com

9435041094

प्रो. ज्योतिप्रकाश तामुली
अध्यापक, भाषाविज्ञान विभाग

गौहाटी विश्वविद्यालय

jyotiprakash.tamuli@gauhati.ac.in

सुरेशचंद्र शुक्ल
अध्यक्ष, भारतीय-नार्वेजीय सूचना एवं सांस्कृतिक फोरम,

संपादक, स्पाइल-दर्पण (ओस्लो से प्रकाशित द्विभाषी- द्वैमासिक पत्रिका)

speil.nett@gmail.com

0047 -90070318

+91 -8800516479

डॉ. अमूल्य वर्मण
सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष एवं सह-अध्यापक,
हिन्दी विभाग, कॉटनकॉलेज

barmanamulyachandra@gmail.com

9854185077

प्रो. अरुण कमल
सेवानिवृत्त अध्यापक, अंग्रेजी विभाग

पटना विश्वविद्यालय एवं

विशिष्ट हिन्दी कवि

arunkamal1954@gmail.com

995998076

आशा प्रभात
प्रतिष्ठित हिन्दी साहित्यकार

ashaprabhat77@gmail.com
8210826546, 9835263251

रुणिमा शर्मा
उपाध्यक्ष एवं सह-अध्यापक

असमीया विभाग,कलियाबर
महाविद्यालय,नगाँव,असम

rsarmah.sarmah@gmail.com
9957620321

डॉ. बैकुंठ राजवंशी
सह-अध्यापक, असमीया विभाग,
प्रागज्योतिष महाविद्यालय, गुवाहाटी

brajbongshi01@gmail.com
9435103320

गोलोक चंद्र वैश्य
विशिष्ट हिन्दी सेवी, असम

7636885495

संपादक

पूजा बरुवा
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
नगाँव महाविद्यालय(ऑटोनोमस)
pujabaruah7274@gmail.com
8486316810

डॉ. अनामिका राजबंशी
सहायक प्राध्यापक, असमीया विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
anamika@gauhati.ac.in
8011525022

संपादक मंडल

पूजा शर्मा
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
poojasarmahindi@gauhati.ac.in
8638964510

बिद्या दास
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
hindibidya14@gmail.com
8447785671

डॉ. प्रीति बैश्य
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
प्रागज्योतिष महाविद्यालय
pritibaishya@pragjyotishcollege.ac.in
9678885119 / 9707653753

उदिप्त तालुकदार
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
आर्य विद्यापीठ महाविद्यालय(ऑटोनोमस)
udipta.talukdar@avcollege.ac.in
7002272818

डॉ. दीपामणि हालै
सहायक प्राध्यापक, असमीया विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
dipamani@gauhati.ac.in
7002653471

डॉ. करबी खेरकटारी बड़ो
सहायक प्राध्यापक, असमीया विभाग
प्रागज्योतिष महाविद्यालय
karabi@pragjyotishcollege.ac.in
7086519972

उत्पल डेका
कवि एवं अनुवादक
utpalkashyap123@gmail.com
8011472744

पंकज शर्मा
सहायक प्रोफेसर, आइकॉन कॉमर्स कॉलेज
(तकनीकी सहयोगी)
8638552898
pankaj11246@gmail.com

संपादकीय

साहित्य देश-काल की सीमा का अतिक्रम कर भिन्न भाषा के साहित्य के अध्ययन के जरिए हमें जोड़ता है । क्रमश: अंत:सम्बन्धित दुनिया में साहित्य संस्कृति, भाषा और इतिहास के बीच सेतु की तरह काम करता आया है। यह हमें भिन्न दृष्टिकोण से मानव अनुभवों को समझने की अनुमति देता है और सहानुभूति तथा समझौते की वकालत करता है । बहुभाषिक साहित्य को स्वीकार कर लेना ही वैचित्रमय संस्कृति के विषय में हमारी सोच को समृद्ध करता है और विश्वव्यापी इस एकता का पालन-पोषण करता है । वैचित्रमय भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक भंडार से समृद्ध द्विभाषिक ई-पत्रिका 'लौहित्य साहित्य सेतु' का यह आठवाँ अंक है । असम तथा भारत के भिन्न रचनाओं के साथ-साथ इसमें मौलिक रचनाओं को भी महत्व दिया जाता है। जिस तरह 'सेतु' नदी पार करने का एक माध्यम है, ठीक उसी तरह अनुवाद साहित्य भी एक ऐसा ही माध्यम है, जिसके जरिए स्रोत भाषा में प्रकाशित धारणाएँ लक्ष्य भाषा में उसी तरह प्रकाशित होती हैं। 'लौहित्य साहित्य सेतु' में हिंदी और असमीया – ये दो भाषाएँ मूलत: लेखन का माध्यम है । 'लौहित्य साहित्य सेतु' के इस अंक में कुछ लेख, निबन्ध, शोध-पत्र, समीक्षा, मौलिक कविता, अनूदित कविता आदि प्रकाशित हुए हैं। दोनों भाषाओं के भिन्न स्वादयुक्त साहित्य के साथ-साथ समग्र विश्व के भिन्न भाषी साहित्य को इन दो भाषाओं के जरिए प्रकाशित करके यह भिन्न भाषी लेखक और पाठक के हृदय में एक सेतु का निर्माण करे यही हमारा मूल लक्ष्य है।

भाषिक वैचित्र रक्षा के क्षेत्र में साहित्य महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । अनुवाद, मौलिक रचना, शोध आदि के महत्व को ध्यान मे रखकर हमने हमारे पाठकों को बहुभाषिक साहित्यिक रचनाओं का मूल्यांकन और समर्थन कर उत्साहित करने के लिए इस पत्रिका को प्रस्तुत किया है । हम आशावादी हैं कि भिन्न सुर के साहित्य की उपलब्धि से आपलोग विश्वव्यापी साहित्य में अवदान देनेवाले कंठ के वैचित्र को स्वीकार करेंगे । ऐसा करने से हम विश्व के समृद्ध सांस्कृतिक और भाषिक वैचित्र के विषय में गहरी समझ को बढ़ावादे सकेंगे ।

पूजा बरुवा

डॉ. अनामिका राजबंशी

संपादक, लौहित्य साहित्य सेतु,

वर्ष:5, संख्या:8;जनवरी-जून, 2024

इस अंक में...

हिन्दी खंड

आलेख

- अनन्य उमानंद — पूजा शर्मा — 1
- अरुण कमल की कविताओं में स्थानीय प्रभाव से युक्त शब्द-विधान — रूबी मणि दास — 11
- भारतीय सिनेमा में नारी (हिंदी और असमीया सिनेमा के संदर्भ में) — अनन्या दास — 17
- असम की राभा जनजाति के वाद्ययंत्र — बरषा राभा — 21

कहानी

- सीमा-रेखा — सारा राय — 26
- कविता दादी का जीवन — डॉ. संजीव मंडल — 38

অসমীয়া খণ্ড

গৱেষণা পত্ৰ

- নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকত সমাজ চেতনা : (বিষ্ণু, বেলিয়ে কোৱা সাধু আৰু বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাট নাটকৰ বিশেষ উল্লেখনেৰে) — পিকুমণি বৰা — 46
- 'ঘোষ্ট' নাটকৰ অসমীয়া অনুবাদ ভূতঃ এক অধ্যয়ন — ভাস্বতী বৰুৱা — 52
- উজনি অসমৰ মেচ কছাৰীসকলৰ খাদ্যাভ্যাস- এক অৱলোকন — গায়ত্রী খাৰঘৰীয়া — 60

প্ৰবন্ধ

- দেৱব্ৰত দাসৰ চুটিগল্পৰ বৰ্ণনাশৈলী — ড০ দীপামণি হালৈ মহন্ত — 68
- সাহিত্যত অভিযোজনঃ এটি ধাৰণাগত বিশ্লেষণ — ড০ অনামিকা ৰাজবংশী — 72
- ৰোমাণ্টিক অসমীয়া কবিতা বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাৰ ‘হে জননী ভাৰতবৰ্ষ’ — পাঞ্চুৰিকা শইকীয়া — 77

নিবন্ধ

- শুকলতি : অসমৰ পৰম্পৰাগত ঔষধি গছৰ মূল্যৱান নিদৰ্শন — ভাস্বতী কাশ্যপ — 83

অনুবাদ কবিতা

- পাহাৰ — উৎপল ডেকা — 85
- শিশুক শিশুৰ দৰে থাকিব দিয়া — ঋষভ বশিষ্ঠ — 86

কবিতা

- মানুহবোৰ অলিখিত কবিতা — মনালিছা শর্মা — 87

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक:8; जनवरी-जून, 2024

अनन्य उमानंद

पूजा शर्मा

अद्वितीय प्राकृतिक सौन्दर्य की लीलाभूमि असम विशाल भारतवर्ष के पूर्वोत्तर-भाग में स्थित है। इस पुण्यभूमि असम की सभ्यता एवं संस्कृति अखिल भारतीय सभ्यता-संस्कृति की भाँति ही प्राचीन है। 'महामानव-समुद्र' भारतभूमि की तरह यह असम भी अलग-अलग समय में आने वाली वैविध्यपूर्ण मानव-संस्कृतियों, जातियों-प्रजातियों, धर्मावलम्बियों की मिलन-भूमि है। धर्म-अध्यात्म के क्षेत्र में असम में शैव, शाक्त, वैष्णव, शंकरी, इस्लाम, सिक्ख, ईसाई, बौद्ध, जैन जैसी अनेक आस्थाओं की सहोपस्थिति में एक बहुरंगी स्वरूप दृष्टिगत होता है। इस प्रांत के विभिन्न जिलों में अनेकानेक मंदिर, मठ, सत्र, दरगाह, मस्जिद, गुरुद्वारा, चर्च आदि विद्यमान हैं जिनमें उमानंद अन्यतम है । धार्मिक-आध्यात्मिक, ऐतिहासिक तथा पुरातात्विक दृष्टि से समृद्ध उमानंदएक पुरातन धरोहर-स्थल के रूप में अपनी सर्वथा अनूठी पहचान रखता है।

विश्व के सबसे छोटे आवासीय नदी-द्वीप के रूप में प्रसिद्ध उमानंद असम के अन्यतम प्राचीन नगर गुवाहाटी के कछारी घाट की उत्तरी ओर ब्रह्मपुत्र नद के बीचोंबीच स्थित है । इस शिलामय द्वीप या टापू का अक्षांशीय-देशांतरीय विस्तार 26° 11'47''N (उत्तर दिशा) — 91° 44'42''E (पूर्व दिशा) है । 'उमानंद' शब्द 'उमा' (आदिनाथ महादेव की अर्धांगिनी पार्वती या शक्ति का एक अन्य नाम) एवं 'आनंद' (शिव)— इन दो शब्दों के योग से निर्मित है।

ब्रह्मपुत्र की गोद में स्थित उमानंद द्वीप

https://images.app.goo.gl/6cPhTh49LM27rLHA9

इस छोटी-सी पहाड़ी की उत्पत्ति से संबंधित गाथा की जड़ें हिन्दू पौराणिक ग्रन्थों

में विद्यमान हैं । 'कालिकापुराण' और 'योगिनीतंत्र' में उल्लिखितानुसार सृष्टि के आरम्भ में देवाधिदेव महादेव ने अपनी पत्नी उमा के विश्राम हेतु अपने शरीर के एकांश भस्म को छिड़ककर इस पहाड़ी का निर्माण किया था एवं उन्हें तत्व-ज्ञान प्रदान किया था । मान्यता है कि माँ उमा के आनन्दार्थ भगवान शिव भयानन्द के रूप में इस स्थान में चिर विद्यमान हैं और इसीलिए इसे उमानंद या उमानाथ कहा जाता है। अन्य एक किंवदंती के अनुसार ब्रह्मपुत्र नद के बीचोंबीच स्थित इस पहाड़ी पर महादेव गहन योग-साधना में लीन थे। उसी समय कामदेव ने आकर अपने काम-वाण द्वारा भगवान शिव का ध्यान भंग करने का दुःसाहस किया था। तब उनके इस कार्य से क्रोधान्वित होकर महादेव ने अपने तीसरे नेत्र की अग्नि से कामदेव को इसी स्थान पर भस्मीभूत कर दिया था। तब से यह पहाड़ी भस्माचल के नाम से जाने जानी लगी । 'कालिकापुराण' और 'योगिनीतंत्र' में इसे भस्माचल,भस्मकूट और भस्मशैल नामों से अभिहित किया गया है । इस स्थान से नीलाचल पहाड़ी दिखायी देती है जहाँ माँ कामाख्या देवी का मंदिर स्थित है । ऐसी मान्यता है कि जब भगवान शिव भस्माचल पहाड़ी पर ध्यान कर रहे थे, तब माँ उमा नीलाचल पहाड़ी पर उनकी प्रतीक्षा कर रही थीं। उमानंद नाम की उत्पत्ति से संबंधित यह किंवदंती-कथा भी लोक-समाज में प्रचलित है। उल्लेखनीय है कि इस द्वीप की बनावट मोर पक्षी के खुले पंखों की तरह प्रतीत होती है जिसके चलते एक ब्रिटिश अफ़सर ने इसे मयूर द्वीप (Peacock Island) की आख्या भी दी है।

उमानंद द्वीप की उत्तर दिशा में उत्तर गुवाहाटी, दक्षिण में गुवाहाटी शहर, पूर्व में महाबाहु ब्रह्मपुत्र की विशालता एवं दक्षिणी-पश्चिमी ओर ब्रह्मपुत्र की ही गोद में बसे दो अन्य छोटे द्वीप- उर्वशी एवं कर्मनाशा हैं । गुवाहाटी और उत्तर गुवाहाटी से उमानंद तक पहुँचने के एकमात्र साधन नौकाएँ एवं स्टीमर हैं । इस कारण बरसात के दिनों को छोड़कर अन्य सभी समय इस द्वीप की यात्रा की जा सकती है। गुवाहाटी के शुक्रेश्वर घाट या फेंसी बाज़ार घाट से नौका (फेरी) या जहाज़ द्वारा द्वीप तक पहुँचने की व्यवस्था है। हालांकि,एक दूसरी अधिक सुविधाजनक एवं सहज-सुलभ व्यवस्था असम सरकार के अधीनस्थ अंतर्देशीय जल परिवहन द्वारा उपलब्ध करायी गयी है जो उमानंद द्वीप को गुवाहाटी उच्च न्यायालय के समीप उजानबाज़ार घाट से जोड़ती है। इस घाट (उमानंद घाट) पर एवं कुछ ही दूर पर स्थित इसी घाट के एक अन्य भाग लाचित घाट

पर क्रमशः 100 रुपये एवं 20 रुपये प्रति यात्री के शुल्क की व्यवस्था है। सामान्यतः ये यात्राएँ लगभग सुबह 9.30 से शाम 4.30-5.00 तक चलती रहती हैं। घाट पर मौजूद नौकाओं और स्टीमरों पर सवार होकर ब्रह्मपुत्र की उत्ताल तरंगों एवं मनोरम परिवेश का आनन्द उठाते हुए लगभग दस-पंद्रह मिनट का रोमांचक सफ़र तय कर पर्यटक एवं भक्तगण उमानंद की प्रशान्ति में प्रवेश कर सकते हैं।

उमानंद की चोटी पर बसे परिसर तक पहुँचने के लिए 150 से भी अधिक सीढ़ियाँ बनी हुई हैं। तट से लगी हुई पत्थर की सीढ़ियाँ चढ़ने पर दोनों तरफ नन्दी से सुसज्जित एक प्रवेश-द्वार प्राप्त होता है जहाँ से सीमेंट से निर्मित सीढ़ियाँ चढ़ते हुए चोटी तक पहुँचा जा सकता है। आधी से भी अधिक ऊँचाई प्राप्त करने के बाद यात्रियों की सुविधा हेतु पूजा-सामग्री की दुकानों एवं एक छोटे-से होटल की व्यवस्था है। यहाँ से मार्बल से बनी सीढ़ियाँ चढ़ने के बाद कुछ ही ऊँचाई पर उमानंद मंदिर के उजले रंग का मूल प्रवेश-द्वार मिलता है और यहीं से मंदिर-परिसर का आरम्भ होता है।

उमानंद का मूल प्रवेश-द्वार

https://images.app.goo.gl/jbRPFnizG1wCCRWAA

उमानंद द्वीप में कुल छह मंदिर हैं-- श्री श्री उमानंद शिव भैरव मंदिर,चन्द्रशेखर मंदिर,श्री श्री महाप्रभु वैद्यनाथ मंदिर, श्री हरगौरी मंदिर,श्री श्री गणेश मंदिर और श्री हनुमान मंदिर। इनमें से श्री श्री उमानंद शिव भैरव मंदिर, श्री श्री गणेश मंदिर,चन्द्रशेखर मंदिर और श्री श्री महाप्रभु वैद्यनाथ मंदिर उक्त मूल प्रवेश-द्वार के भीतर के परिसर में स्थित हैं, जबकि श्री हरगौरी मंदिर मूल प्रवेश-द्वार की ठीक बाहरी ओर एवं श्री हनुमान मंदिर चोटी से कुछ नीचे की ओर स्थित हैं। समूचे द्वीप में एक अप्रतिम आध्यात्मिक ऊर्जा की विद्यमानता स्पष्टतः अनुभूत होती है।

उमानंद द्वीप मूलतः इसी श्री श्री उमानंद शिव भैरव मंदिर के कारण असम के अन्यतम प्रसिद्ध प्राचीन तीर्थस्थान के रूप में परिगणित किया जाता है। आध्यात्मिकता की भूमि भारतवर्ष में ऐसे तो बहुत सारे शिव मंदिर एवं ज्योतिर्लिंग मौजूद हैं, लेकिन गुवाहाटी का यह उमानंद शिवालय ऐसा अनूठा शिव-धाम है जो अपनी ख़ास भौगोलिक संरचना और प्राचीन किंवदन्ती-कथाओं के लिए बहुचर्चित एवं लोक-समादृत है। मूल प्रवेश-द्वार से होकर

मंदिर-परिसर में प्रवेश करते ही सामने उमानंद मंदिर का उजले रंग का नक्काशियों से युक्त सामनेवाला हिस्सा (परवर्ती समय में निर्मित) दीख पड़ता है। भीतर प्रविष्ट होने पर मुख्य गर्भगृह से सटा हुआ एक बड़ा-सा कक्ष मिलता है जिसके बीचोंबीच विष्णु और ब्रह्मा के विग्रहों की पूजा-अर्चना होती है। नामघर-सदृश इस महाकक्ष से आगे बढ़ने पर उमानंद मंदिर का मुख्य गर्भगृह दिखायी पड़ता है। ऐतिहासिक साक्ष्यानुसार 1616 शक (सन् 1694) में आहोम राजवंश के अन्यतम समर्थ एवं शक्तिशाली शासक गदाधर सिंह (सन् 1681—सन् 1696) ने गड़गाँ संदिकै बरफुकन द्वारा इस मूल मंदिर का निर्माण कराया था। उल्लेखनीय है कि गदाधर सिंह द्वारा निचले असम में निर्माण कराया गया यही एकमात्र देवालय है।

उमानंद-यात्रा के दौरान उमानंदमंदिर के प्रवेश-भाग की स्व-खींची तस्वीर

इस मूल मंदिर में भू-पृष्ठ से लगभग 14 फीट नीचे गर्भगृह के भीतर पत्थर से खुदित अनादि शिवलिंग एवं माँ उमा और महादेव का युगल-विग्रह विराजमान हैं। वस्तुतः इस मंदिर के अधिष्ठाता देवता यही भगवान 'उमानंद' हैं (तत्रास्ति भगवान शम्भूरुमानन्दकराः प्रभु)। इस सन्दर्भ में उल्लेखनीय है कि इस मंदिर में आहोम शासक शिवसिंह द्वारा दान की हुई चाँदी से निर्मित बृषभवाहन दशभुजविशिष्ट उमानंद की 1300 तोले वज़न की एक चलायमान प्रतिमूर्ति भी विद्यमान थी। लेकिन दुर्भाग्यवश सन् 1965 के आसपास उसकी चोरी हो गयी। इसी मूर्ति के सिंहासन के चारों तरफ एक लिपि भी मौजूद थी। अखण्ड दीप की ज्योति से अभिमंडित उक्त अनादि शिवलिंग से ब्रह्मपुत्र तक उत्तर दिशा की ओर प्रवहमान मन्दाकिनी गंगा जुड़ी हुई है। पूजा में अर्पित पुष्प-जल आदि इसी मन्दाकिनी गंगा से होते हुए ब्रह्मपुत्र में जा मिलते हैं। शिवलिंग केऊपर चाँदी से निर्मित दत्तछत्र एवं उसके पास ही नन्दी-भृंगी की पत्थर की खुदी हुई एक मूर्ति है।

कहा जाता है कि किसी समय इस मंदिर का परिसर 9,664 बीघे (लाखिराज) और 6,017 बीघे (निष्पिखिराज) ज़मीन में परिव्याप्त था,पर आज यह संकुचित होकर लगभग 13 बीघे 3 कट्ठे की ज़मीन में सीमित हो गया है। ध्यातव्य है कि सन् 1897 के

प्रलयंकारी भूकंप में यह मंदिर काफी क्षतिग्रस्त हुआ था,पर मूल गर्भगृह यथावत् सुरक्षित रहा। कालान्तर में, श्री धानुका मिल के संरक्षक सम्पन्न स्थानीय व्यापारी रामजी दास गणपत राय ने सन् 1940 में इसका पुनर्निर्माण कराया । हालांकि, पुनर्निर्माण-प्रक्रिया के दौरान नवीनीकरण लाने हेतु उन्होंने न केवल मूल मंदिर के सामने वाले नामघर-सरीखे महाकक्ष का निर्माण करवाया,बल्कि मंदिर के सामने वाले भाग एवं भीतर की दीवारों पर राधे-श्याम शब्द-युक्त टाइल्स का भी प्रयोग किया । इसके फलस्वरूप समग्रतः देखने पर वर्तमान यह शिवालय उमानाथ, विष्णु एवं ब्रह्मा का समाहार बन पड़ा है।

स्थानीय पुजारियों की मान्यतानुसार सोमवार को पड़ने वाली अमावस्या तिथि इस मंदिर में पूजा-अर्चना के लिए सबसे शुभ एवं परमानन्ददायक मानी जाती है। इस विश्वास की पुष्टि 'योगिनीतंत्र'में उल्लिखित प्रस्तुत श्लोक से ही हो जाती है, यथा –

अथ चान्यत् प्रवक्षामि गुह्याद गुह्यतरं शुभं।
बृषध्वजस्य माहात्म्यं शृणु देवि वरानने।
संयुक्ता सोमवारेण अमवस्या भवेद् यदि।
तदा भस्माचलं गत्वा देवमभ्यर्च्च यत्नतः।
कुलैकविंशमुद्धृत्य च गच्छेत परमं पद॥

(पंचम पटल,श्लोक185)

(अर्थात्, हे देवी ! वृषध्वज शिव के माहात्म्य से संबंधित एक मंगलकारी रहस्यमयी बात सुनिए -- यदि सोमवार की अमावस्या तिथि का संयोग प्राप्त हो, तब भस्माचल पहाड़ी पर जाकर यथाविधि का अनुपालन करते हुए बड़े ही यत्नपूर्वक वृषध्वज शिव की पूजा-अर्चना करने से भक्त अपनी इक्कीस पीढ़ियों तक का उद्धार करके स्वयं भी परम पद को प्राप्त कर सकता है।)

उमानंद मंदिर में प्रत्येक वर्ष महाशिवरात्रि का पावन पर्व बड़े ही हर्षोल्लास के साथ मनाया जाता है । इस दिन यहाँ विशाल मेले का आयोजन होता है तथा महादेव एवं माँ उमा के दर्शनार्थ श्रद्धालुओं का ताँता-सा लग जाता है । विधिपूर्वक पूजा-अर्चना करने हेतु भक्तगण सुबह से ही लम्बी कतार बनाकर तट से ऊपर की चोटी तक बनी सीढ़ियों पर चलते जाते हैं। इस दिन यहाँ दिन-भर भोग चलता रहता है और कोई भी भक्त बिना भोलेनाथ का भोग ग्रहण किए मंदिर-परिसर से वापस नहीं जाता। मान्यता है कि फाल्गुन महीने के इस विशेष दिन को माँगने वालों की हर मनोकामना भगवान उमानंद पूरी करते हैं।

मूल प्रवेश-द्वार से मंदिर-परिसर में प्रविष्ट होते ही दाहिनी ओर उजले रंग का श्री श्री गणेश मंदिर दिखायी पड़ता है। भक्तगण सबसे पहले यहाँ स्थापित अग्रपूज्य भगवान

गणेश के पत्थर पर खुदित विग्रह की अर्चना करने के बाद ही उमानंद मंदिर की ओर आगे बढ़ते हैं।

उमानंद मंदिर की बायीं ओर ईंट से निर्मित लाल रंग का एक छोटा-सा मंदिर स्थित है। इस मंदिर का निर्माण सन् 1820 में आहोम शासक चन्द्रकान्त सिंह ने किया था और आज भी यह उसी प्राचीन रूप में विद्यमान है । स्थानीय पुजारी से प्राप्त तथ्यानुसार इस देवालय का नामकरण विवादास्पद है । इसे अलग-अलग समय पर चन्द्रशेखर मंदिर एवं महाकाल मंदिर के नामों से अभिहित किया जाता रहा है। आठकोणीय शिखर की वर्गाकृति के इस मंदिर के भीतर शिवलिंग स्थापित है । मंदिर की बाहरी दीवारों पर आहोम वास्तु-कला के दर्शन होते हैं । इसके प्रवेशद्वार के सामने आज भी एक अस्पष्ट शिलालिपि है जो गदाधर सिंह की 1616 शक की बतायी जाती है। इसमें खुदित लिपि-चिह्न तो कालधारा की गति में अस्पष्ट हो गए हैं,पर ध्यान देने पर कुछेक रूप प्राचीन ब्राह्मी जैसे प्रतीत होते हैं । ऐसी प्राचीन शिलालिपियों के समुचित संरक्षण एवं उनके गहन पुरातात्विक अध्ययन की नितांत आवश्यकता है।

चन्द्रशेखर मंदिर या महाकाल मंदिर के ठीक सामने भूरे रंग का एक छोटा-सा मंदिर है जो श्री श्री महाप्रभु वैद्यनाथ मंदिर के नाम से जाना जाता है । सन् 1989 में निर्मित इस मंदिर के दाता नाजिरा के निवासी श्री जगन्नाथ गगै हैं । इस मंदिर के भीतर भी शिवलिंग स्थापित है और भक्तगण यहाँ बिना माथा टेके नहीं जाते। मूल प्रवेश-द्वार के ठीक बाहर बायीं ओर श्री हरगौरी मंदिर स्थित है । श्री नवज्योति देव चौधुरी-कृत 'पुण्यभूमि असम' से प्राप्त तथ्यानुसार इस मंदिर कानिर्माण आहोम शासक शिवसिंह ने सन् 1700 में किया था । हालांकि, ऐतिहासिक साक्ष्यानुसार स्वर्गदेउ शिवसिंह का शासनकाल सन् 1714-1744 तक का रहा। इस स्थिति में इस मंदिर का निर्माण किस आहोम शासक द्वारा हुआ, यह अभी भी विवादास्पद बना हुआ है। फिर भी, आहोम स्थापत्य एवं मूर्ति-कला के एक और अनूठे नमूने के तौर पर यह मंदिर आज भी अपने उसी प्राचीन रूप में विद्यमान है । उमानंदमंदिर के मूल प्रवेशद्वार की बाहरी तरफ विपरीत दिशा में चोटी से कुछ नीचे की ओर श्री हनुमान मंदिरस्थित है जिसका निर्माण एक भक्त द्वारा सन् 1962 में हुआ था । यहाँ रुद्रावतार के रूप में भगवान हनुमान की पूजा की जाती है।

उमानंद-मंदिर के अतिरिक्त अन्य पाँच मंदिर : 1.श्री श्री गणेश मंदिर, 2. चन्द्रशेखर मंदिर या महाकाल मंदिर,3. श्री श्री महाप्रभु वैद्यनाथ मंदिर, 4. श्री हरगौरी मंदिर और 5. श्री हनुमान मंदिर की स्व-खींची तस्वीरें

मंदिर-परिसर में एक निर्धारित समय पर नगाड़ा-कीर्तन होता है जिसके बाद भगवान को भोग चढ़ाया जाता है और फिर मंदिर के पुजारी एवं श्रद्धालु भोग ग्रहण करते हैं। मंदिर के एक वरिष्ठ पुजारी श्री बिपिन शर्मा जी से साक्षात्कार के दौरान प्राप्त तथ्यानुसार सन् 1694 में जब गदाधर सिंह ने मूल मंदिर का निर्माण कराया था तब असम में कोई ब्राह्मण परिवार स्थायी रूप से निवास नहीं करता था। तब गदाधर सिंह औरंगज़ेब के जरिए कन्नौज से दो ब्राह्मण-परिवारों को यहाँ लाए और आज भी उन्हीं की पीढ़ियाँ इस मंदिर की देख-रेख कर रही हैं। उमानंद मंदिर में आज तीन स्थानों के आवासी पुजारी सेवारत हैं -- चांगसारी के पराशर-गोत्र के पुजारी,हेलचा के भारद्वाज-गोत्र के पुजारी और पछरीया के शांडिल्य-गोत्र के पुजारी। मंदिर के पुजारियों से संबंधित एक नियम भी प्रचलित है जिसके अनुसार इस पहाड़ी पर किसी भी पुजारी के परिवार के स्थायी रूप में निवास न करने की शर्त है। आज भी इस नियम का अनुपालन करते हुए सभी पुजारियों के परिवार उपरोक्त तीन स्थानों में निवास करते हैं। दिन-भर होने वाली पूजा-अर्चना के बाद मंदिर-परिसर में केवल मूल पुजारी एवं एक सहायक पुजारी ही रहते हैं।

उमानंद द्वीप एवं उसके मूल मंदिर के साथ एक किंवदन्ती-कथा भी जुड़ी हुई है। मंदिर के पुजारी श्री बिपिन शर्मा जी जनश्रुति के आधार पर इसका खुलासा करते हुए बताते हैं कि द्वापर-युग में गुवाहाटी प्रागज्योतिषपुर के नाम से प्रसिद्ध था। संभवतः उस समय यह पहाड़ी प्रागज्योतिषपुर के साथ जुड़ी हुई थी। ब्रह्मपुत्र नद इस पहाड़ी के उत्तर की ओर से बहता था। इस पहाड़ी की दाहिनी ओर एक सौदागर रहता था जिसके पास बहुत सारी गायें एवं अन्य पशु थे। उन्हीं में से एक कामधेनु (गाय) नित-प्रतिदिन दूध देने इस पहाड़ी पर चली आती थी। आसपास के लोगों से मिली जानकारी के अनुसार जब सौदागर ने अपनी उस गाय का पीछा किया तब उसने देखा कि वह गाय रोज़ एक बेल के पेड़ के नीचे दूध देती है। उत्सुकतावश सौदागर ने उस स्थान की

खुदाई करवायी तो वहाँ एक शिवलिंग प्राप्त हुआ । उसी रात सौदागर के सपने में स्वयं महादेव ने दर्शन दिए और उससे कहा कि इतने काल तक वे मनुष्यों की दृष्टि से अन्तर्धान थे,पर आज उनके प्रतीक-स्वरूप शिवलिंग को प्रकट कर दिया गया । इतना कहकर महादेव ने उस सौदागर को उस पहाड़ी पर एक शिव मंदिर बनाने का आदेश दिया । उसी रात एक भयानक भूकंप के कारण ब्रह्मपुत्र का बहाव दो भागों में बंट गया और वह पहाड़ी प्रागज्योतिषपुर से कटकर ब्रह्मपुत्र नद के बीचोंबीच एक द्वीप के रूप में रह गयी । जब जलस्तर का उफान कुछ कम हुआ तब उस सौदागर ने वहाँ जाकर बाँस-फूस द्वारा एक मंदिर का निर्माण किया । इस प्रकार यहाँ के शिवलिंग की उत्पत्ति की यह लोक-कथा काफी प्रचलित है ।

मंदिर के पूर्वोक्त पुजारी के तथ्यानुसार इसी झोपड़ी-नुमा मंदिर के स्थान पर प्रागज्योतिषपुर के राजा नरकासुर ने पत्थर से निर्मित एक मंदिर की स्थापना की थी । सन् 1553 में गौड़ के नवाब सुलेमान कररानि के सेनापति कालापाहार ने अपने असम-आक्रमण के दौरान कामाख्या मंदिर एवं हयग्रीव-माधव मंदिर के साथ ही नरकासुर द्वारा निर्मित इस पत्थर के शिव मंदिर का भी विध्वंस कर दिया था । इस सम्बन्ध में मंदिर के उक्त पुजारी मंदिर-परिसर के किन्हीं स्थानों पर तथा द्वीप के दक्षिणी तट पर उस पत्थर-मंदिर के भग्नावशेषों की ओर संकेत अवश्य करते हैं, पर इस तथ्य की पुष्टि हेतु कोई ऐतिहासिक साक्ष्य उपलब्ध नहीं है । कालान्तर में, आहोम शासक गदाधर सिंह ने इसी स्थान पर वर्तमान के उमानंद मंदिर का निर्माण कराया । समय के साथ-साथ मंदिर के बाहरी स्वरूप एवं मंदिर-परिसर में परिवर्तन अवश्य आते गए पर उमानंद विग्रह से युक्त मूल गर्भगृह अक्षत बना रहा ।

गुवाहाटी शहर के आस-पास के पंचतीर्थों में से अन्यतम उमानंद असम के राज्यिक संरक्षित स्थानों के अन्तर्गत आता है । यह द्वीप सन् 1980 के आसपास स्थापित विलुप्तप्राय सुनहरे लंगूरों की एक नस्ल का आवासस्थान भी रहा है । हालांकि, वर्तमान समय में उनमें से केवल एक ही लंगूर जीवित है जिसे असम राज्य चिड़ियाघर में स्थानांतरित किया गया है । इसके अलावा यहाँ वनरौ, बिल्ली और कुछेक पक्षी भी देखे जाते हैं । उमानंद में इमली के पेड़ों की बहुतायत लक्षित होती है । अन्य पेड़-पौधों और पुष्पों में बेल, वटवृक्ष, रुद्राक्ष, नीम, आम, आँवला, महानींबू, नारियल, कटहल, खजूर, 'पमा',

तुलसी, हरशृंगार, शेफाली, कृष्णचूड़ा, राधाचूड़ा आदि उल्लेखनीय हैं । उमानंद पुरातात्विक दृष्टि से भी समृद्ध है। इसमें प्राक्-मध्ययुगीन काल के ऐसे अनेक पत्थर पर खुदित स्थापत्य, शिलालिपि, नक्काशी के दर्शन होते हैं जो आहोम युग के कारीगरों की उत्कृष्ट कारीगरी के साक्षात् प्रमाण हैं । मंदिर के पूर्वोक्त पुजारी से प्राप्त जानकारी के अनुसार चोटी के कुछ नीचे की ओर दक्षिणी तट पर पत्थर से बनी एक उत्तर-गुप्तकालीन गुफा भी मौजूद है जिसकी बाहरी ओर माँ अन्नापूर्णा (माँ दुर्गा का एक अन्य रूप) की चतुर्भुजी मूर्ति और भगवान गणेश की मूर्तियाँ खुदी हुई हैं । इसी गुफा की भीतरी दीवारों पर कुछ खुदित लिपि-स्वरूप अवशेष भी पाये जाते हैं।

मान्यता है कि उमानंद कामाख्या देवी का भैरव है जिसके कारण श्रद्धालुओं को सबसे पहले उमानंद के दर्शन करके फिर पाण्डु के पंचपाण्डव के दर्शन करने चाहिए और उसके बाद ही नीलाचल पर्वत पर स्थित कामाख्या में पूजा-अर्चना करनी चाहिए। 'कालिकापुराण' एवं 'शिवपुराण' में उल्लिखित कथाएँ इस द्वीप को और भी अधिक दैविक एवं विशिष्ट बनाती हैं। इस अद्वितीय तीर्थस्थल पर भक्तों की बड़ी आस्था है जो आज के भौतिकतावादी समय में भी अक्षुण्ण बनी हुई है । वर्तमान उमानंद के बीचोंबीच गुवाहाटी महानगर और उत्तर गुवाहाटी के संयोगी रोपवे (ropeway) का एक टावर निर्मित हुआ है जिसे आधुनिकीकरण के प्रभाव के तौर पर लिया जा सकता है ।

अनादि काल से प्रवहमान ब्रह्मपुत्र नद की शुभ्र निर्मल लहरों से अविराम टकराते उमानंद की नैसर्गिक शोभा पर्यटकों को सहज ही अपनी ओर आकर्षित करती है । अन्य तीर्थस्थानों की तुलना में यह द्वीप एक आनन्ददायक अपवाद-स्वरूप है । मनोरम प्राकृतिक सौन्दर्य से सुशोभित यह स्थान प्रकृति प्रेमियों के लिए भूस्वर्ग-सरीखा है । इसके तटीय भाग से लोहित के अनिर्वचनीय रूप-लावण्य और गुवाहाटी महानगर के भव्य सौन्दर्य का आनन्द उठाया जा सकता है । धर्मीय उपासना के इस पवित्र स्थान में पदार्पण करने वाले प्रत्येक भक्त का मन एक अनन्य प्रशान्ति से भर उठताहै । उमानंद-मंदिर के दर्शन के बाद शाम को ढलते हुए सूरज की रक्तिम किरणों की रोशनी से विशालकाय ब्रह्मपुत्र की धारा ज्योर्तिमंडित हो उठती है । प्रकृति की अप्रतिम सुन्दरता एवं आध्यात्मिकता की सहज भावना को फलीभूत करती उमानंद की यात्रा निश्चित रूप से दर्शनार्थियों को अविस्मरणीय स्मृति प्रदान करती है। महाबाहु ब्रह्मपुत्र का कंठहार-सदृश

यह उमानंद 'सत्यम्, शिवम् और सुन्दरम्' का आस्थामय सन्देश देता हुआ अनन्त काल तक जनमानस में दिव्य अनुभूति एवं परम शान्ति की जागृति करता रहेगा।

उमानंद सचमुच अनन्य है,अद्वितीय है!

(**नोट** : प्रस्तुत लेख की रचना हेतु उमानंद की यात्रा द्वारा सर्वेक्षण और साक्षात्कार के माध्यम से यथावश्यक तथ्यों के संग्रह का प्रयास किया गया है। इसके अतिरिक्त डॉ॰ प्रदीप बरुवा-कृत 'चित्र-बिचित्र असम', श्री नवज्योति देव चौधुरी-कृत 'पुण्यभूमि असम' और श्री शान्तनु कौशिक बरुवा-कृत 'असमर ऐतिह्य' जैसे ग्रन्थों एवं इंटरनेट की सहायता ली गयी है।)

संपर्क सूत्र :

सहायक आचार्या

हिन्दी विभाग

गौहाटी विश्वविद्यालय

पिन:781014

दूरभाष : 8638964510

ई-मेल : poojasarma2015@gmail.com

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक: 8; जनवरी-जून, 2024

अरुण कमल की कविताओं में स्थानीय प्रभाव से युक्त शब्द-विधान

रूबी मणि दास

प्रत्येक कवि की शिल्पगत विशेषताएँ अलग-अलग होती है। शिल्प विधान के अंतर्गत शब्द, बिम्ब, प्रतीक, मुहावरे एंव लोकोक्तियों को लिया जाता है। इन बिंदुओं के आधार पर ही एक कवि तथा उनके द्वारा लिखित कविता की चर्चा की जाती है। शिल्प-विधान का सबसे प्रमुख तत्व है शब्द। शब्द ही बिम्ब, प्रतीक, मुहावरे इन सभी का आधार है।कविता को हृदय की वाणी कहा जाता है, जिन भावों को कवि द्वारा अनुभव किया जाता है, उसे उसी रूप में कवि अपनी बोली द्वारा कविता के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। इन भावों की अभिव्यक्ति के लिए कवि की मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषा ही सर्वश्रेष्ठ होती है। कवि अपनी मातृभाषा अथवा स्थानीय भाषा में जैसे अपने भावों को अभिव्यक्त कर पाऐंगे, वैसे दूसरी भाषा में नहीं, क्योंकि वह कवि की अपनी भाषा, अपने शब्द हैं, अपने हृदय की भाषा है।

भाषा मनुष्य के भाव, विचार तथा अनुभूतिओं के अभिव्यक्ति का श्रेष्ठ साधन है।भाषा के अभाव में विचारों का सही और सटीक संप्रेषण कभी संभव नहीं होता। लेखक तथा कवि के लिए तो यह और भी आवश्यक है कि वह अपनी लेखनी में भावों की अभिव्यक्ति के लिए सही शब्दों का चयन करें। प्रत्येक स्थान में रहनेवाले लोगों का रहन-सहन, खान-पान जिस प्रकार भिन्न-भिन्न होता है, उसी प्रकार भाषा और बोली भी भिन्न-भिन्न होती है। एक व्यक्ति अपनी मातृभाषा तथा स्थानीय भाषा को सबसे पहले सीखता है। अपनी स्थानीय भाषा से ही व्यक्ति का गहरा लगाव होता है। जीवन निर्वाह के लिए हो या अनेक कारणों से व्यक्ति जिस किसी भी भाषा का प्रयोग क्यों न करे, पर अपनी स्थानीय भाषा तथा मातृभाषा को कभी भूलता नहीं है। अरुण कमल की कविताओं में ऐसे अनेक शब्द देखे जाते हैं, जो उनके स्थानीय परिवेश तथा स्थानीय भाषा के प्रति लगाव को दर्शाते हैं।

कवि अरुण कमल बिहार के रहनेवाले हैं। बिहार में प्रमुख रूप से मगही, मैथिली, भोजपूरी आदि बोलियों का प्रयोग किया जाता

है।अत: इन स्थानीय बोलियों का प्रभाव कवि अरुण कमल पर देखा जाता है । लेकिन कवि अरुण कमल पर भोजपूरी का प्रभाव अधिक देखा जाता है । अरुण कमल हिंदी के समकालीन कवि हैं। हिंदी के समकालीन कवि और लेखकों ने अपने भाव-विचारों की अभिव्यक्ति के लिए सहज-सरल भाषा का प्रयोग किया है। अरुण कमल ने भी अन्य कवि और लेखकों की भाँति सहज-सरल भाषा का ही प्रयोग अपने काव्य में किया है, लेकिन उनके काव्य में उनकी स्थानीय भाषा के अनेक शब्द देखे जाते हैं, क्योंकि उनके मन में अपने स्थान, परिवेश तथा अपने लोगों के प्रति अत्यंत लगाव है।वे हर दृष्टि से अपने जड़ से जुड़े रहना चाहते हैं । अपने जड़ से जुड़े रहने के कारण उनके काव्य में यथार्थता अधिक विद्यमान है ।

अरुण कमल के कविताओं में शब्द एंव वाक्य:

किसी भी साहित्यिक लेखन में चाहे वह कविता, कहानी, उपन्यास हो या नाटक हो सबमें शब्दों का चयन बहुत मायने रखता है । उचित शब्दों का प्रयोग ही साहित्यकार के भावों को व्यक्त करने में सहायक होती है । शब्दों के उचित चयन के द्वारा ही एक अर्थपूर्ण वाकय का निर्माण होता है । कविता लेखन में तो सबसे पहला और महत्वपूर्ण तत्व शब्द है, क्योंकि शब्द द्वारा ही कवि के भाव-संवेदनाओं को आकार दिया जाता है । इसलिए शब्द को कविता की आत्मा भी कहा जा सकता है ।

कवि अरुण कमल ने अपनी कविता लेखन में हिंदी भाषा के सहज-सरल शब्दों का प्रयोग किया है, लेकिन उनकी कविताओं में उनकी स्थानीय बोली के भी अनेक शब्द तथा अंग्रेजी भाषा के भी कुछ शब्द देखे जाते हैं । अरुण कमल समकालीन कवि हैं और अपने समय तथा समाज की प्रत्येक सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि परिस्थितियों को लोगों के समक्ष प्रस्तुत करने तथा उनके प्रति साधारण जनता को सचेत करने में उनके स्थानीय बोली के अनेक शब्द सहायक सिद्ध हुए हैं । स्थानीय शब्दों के प्रयोग के कारण उनकी कविता अधिक आकर्षक बन गयी हैं । अरुण कमल द्वारा लिखित काव्य-संग्रह 'अपनी केवल धार' की 'यात्रा' कविता की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य है–

> पंजाब तो बहुत खुशहाल है,निहाल सिंह ?
> सुनते हैं लोग वहाँ दूध और मट्ठे से तर हैं ।।
> (कमल 2012:12)

इन पंक्तियों में कवि अरुण कमल ने 'तर' स्थानीय शब्द या देशज शब्द का प्रयोग किया है । 'तर' का अर्थ होता है डूबना या भिगोना।दूध और मट्ठे से न तो कोई भीगता है और नहीं कोई डूबता है । 'तर' शब्द से

कविकहना चाहते हैं कि पंजाब में दूध और मट्ठे की कोई कमी नहीं है, वहाँ भरपुर मात्रा में दूध और मट्ठा मिलता है । 'तर' के स्थान पर यदि अधिक,बहुत या ज्यादा शब्द का प्रयोग किया जाता तो यह पंक्ति उतनी रोचक नहीं होती जितनी तर शब्द के प्रयोग से हुई है।इस कविता में कवि ने एक और स्थानीय शब्द का प्रयोग किया है जो है 'गसा' । 'गसा' यानी किसी चीज की अधिकता–

दूर अंधकार गहन गसा अंधकार ।।

(कमल 2012:13)

यहाँ कवि ने भयानक अंधकार का चित्रण करने के लिए गसा शब्द का प्रयोग किया है । कवि ने 'यात्रा' कविता में ऐसे पंजाबी मजदूरों के बारे में कहा है जो अपने और अपने परिवार के जीवन निर्वाह हेतु कलकत्ते के कारखाने में काम करते हैं । कवि ने इस कविता में ऐसे स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है, जिससे इन मजदूरों के जीवन में होनेवाले उतार-चढ़ाव उजागर हो जाते हैं –

तलहथियों की आड़ में बगलगीर मुसाफिर ने
सुलगायी माचिस
और उघारती गयी लौ चेहरे के अनगिनत
रहस्य ।। (कमल 2012:12)

कवि ने यहाँ हथेलियों के स्थान पर तलहथि तथा जलायी के स्थान पर सुलगायी जैसे स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है । कवि द्वारा प्रयुक्त इन शब्दों ने कलकत्ते में काम करनेवाले मजदूर की परिस्थिति को हमारे समक्ष उपस्थित किया है । मजदूर हथेलियों की आड़ लेकर माचिस जला रहा है,उसी की लौ में उसके हाव-भाव भी उभरकर सामने आ रही है । उसके हाव-भाव से पता चलता है कि वह गभीर चिंतन में हैं।

'सबूत'काव्य संग्रह की 'भूसी की आग' कविता में कवि ने कहा है –

मिट्टी की बोरसी में धान की भूसी की
थोड़ी सी आग थी
आग के ऊपर
एक-दूसरे के तर-ऊपर
कई जोड़े हाथ थे
अपने को सेंकते
तभी किसी बच्चे ने
लोहे की सींक से आग उकटेरी
और धाह फेंकती लाल आग ।।

(कमल 2012:62)

यहाँ उकटेरी, बोरसी, धाह आदि स्थानीय शब्द हैं । 'धरती और भार' शीर्षक कविता में कवि द्वारा लिखित कुछ पंक्तियाँ देखिए –

भौजी, डोल हाथ में टाँगे
मत जाओ नल पर पानी भरने ।।

(कमल 2012:19)

यहाँ कवि ने 'भौजी' शब्द का प्रयोग किया है । 'भौजी' एक भोजपूरी शब्द है । भोजपूरी में भाभी को भौजी कहा जाता है । इस कविता में कवि ने ग्रामीण इलाकों में होनेवाली पानी की दिक्कत के बारे में कहते हुए नारी की स्थिति के बारे में भी कहा है । एक नारी किस प्रकार घर का सारा काम करने के बाद गर्भावस्था में भी मीलों चलकर पानी भरने जाती है, लेकिन उस नारी की सहायता करनेवाला घर में कोई नहीं।इसी कविता की एक और पंक्ति में कवि ने 'बउआ' शब्द का प्रयोग किया है । 'बउआ' का अर्थ है बच्चा।यह भी भोजपूरी शब्द है ।

ऊपर नीचे दोलेगा पेट
और थक जाएगा बउआ ।। (कमल 2012:19)

इन पक्तियों के द्वारा कवि कहना चाहते हैं कि भौजी जब इतना दूर चलकर पानी भरने जाती है, तब उसके पेट के भीतर जो बच्चा पल रहा है उसे कष्ट होता है ।

कवि अरुण कमल ने अपनी कविता 'ओह बेचारी कुबड़ी बुढ़िया' में 'पतोहू' शब्द का प्रयोग किया है । 'पतोहू' यानी 'पुत्र की पत्नी' । यह भी एक भोजपूरी शब्द है । कवि ने इस कविता के माध्यम से एक ऐसी वृद्ध महिला का चित्रण किया है जो बेटा और बहू होने के बाद भी दिनभर कष्टपूर्ण काम करके अपना जीवन निर्वाह करती है । वह कोयला तोड़ती है, कपड़ा धोती है, दूसरो के घर जाकर बर्तन माँजती है, तेल मालिस करती है । इतना काम करने के बाद भी घर में उसका कोई आदर-सम्मान नहीं है । बेटा और बहू माँ को वृद्धावस्था में सहारा देने के बजाय उससे झगड़ा करते हैं । इसी दुख के कारण बैठे-बैठे ही उसकी मृत्यु हो जाती है–

घर आयी फिर चूल्हा जोड़ा
और पतोहू से भी झगड़ी ।।
(कमल 2012:30)

'सबूत' काव्य-संग्रह की 'फिर भी' शीर्षक कविता की कुछ पंक्तियाँ इसप्रकार है–

मैंने देखा साथियों को
हत्यारों की जै मनाते ।। (कमल 2004:72)

यहाँ कवि ने 'जै' शब्द का प्रयोग किया है, 'जै' शब्द का शुद्ध प्रयोग 'जय' है । उच्चारण की सुविधा के लिए लोग सामान्य बोलचाल की भाषा में जय के स्थान पर जै बोलते हैं ।

'अपनी केवल धार' काव्य संग्रह की ही एक और कविता 'दरजिन' में कवि द्वारा प्रयोग किए गए कुछ स्थानीय शब्द हैं –

बेबियों का गरारा जम्पर समीज
आपका ब्लाउज
सब कुछ सीती हूँ बीबी जी ।।
(कमल 2012:40)

यहाँ गरारा, जम्पर आदि स्थानीय शब्द है। 'दरजिन' कविता की ही कुछ अन्य पंक्तियों में भी हम स्थानीय शब्द देख सकते हैं –

यह नहीं कि उनसे कम आपसे जादे
जी ?इससे कम ? गुजारा नहीं होगा बीबी जी
सोचिए केतना काम है ।। (कमल 2012:40)

इन पंक्तियों में 'जादे', 'केतना' आदि स्थानीय शब्द या देशज शब्द हैं।

'एक नवजात बच्ची को प्यार'शीर्षक कविता में कवि ने बेटी के जन्म होने पर घर की स्थिति कैसी होती है उसीका चित्रण किया है। घर में जब बेटे का जन्म होता है तो लोग खुश होते हैं, नाचते-गाते हैं, मिठाईयाँ बाँटते हैं। लेकिन जब बेटी का जन्म होता है तो सब दुखी होते हैं। बेटी के जन्म के पश्चात घर के माहौल का वर्णन करते हुए कवि ने कुछ स्थानीय शब्दों का प्रयोग किया है–

क्या हुआ जो तुम्हारी दादी ने बधावे नहीं दिए
और उनका यह आँगन पँवरियों की ढोलकों से आबाद नहीं हुआ ।। (कमल 2012:48)

यहाँ 'बधावे' का अर्थ है बधाई देना और 'पँवरिया' का अर्थ होता है 'किन्नर'। अर्थात् पोती के जन्म के कारण दादी ने किसी को बधाई नहीं दी तथा किन्नरों द्वारा घर के आँगन में ढोलक बजाते हुए नाच-गाना भी नहीं किया गया।

'सबूत' काव्य-संग्रह की 'जीवधारा' शीर्षक कविता में कवि ने कहा है –

कभी-कभी बथान में गौएँ करवट बदलती हैं
बैल जोर से छोड़ते हैं साँस
अचानक दीवार पर मलकी टॉर्च की रोशनी
कोई निकला है शायद खेत घूमने ।।
(कमल 2004:12)

यहाँ कवि ने 'बथान', 'गौएँ', 'मलकी' आदि स्थानीय शब्दों का प्रयोग करते हुए पाठकों के समक्ष एक स्थानीय परिवेश का चित्रण करने का प्रयत्न किया है। सामान्य तौर पर बथान के स्थान पर चाराघर, गौएँ के स्थान पर गाय, मलकी के स्थान पर चमकी आदि का प्रयोग किया जाता है।

कवि की 'जेल का अमरूद' नामक कविता की कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य है –

तो अभी-अभी फूल से उठा ही था फल
हरा कचूर ।। (कमल 2004:15)

यहाँ 'कचूर' शब्द का प्रयोग कवि ने किया है। कचूर का प्रयोग कवि ने गहराई या अधिकता को दर्शाने के लिए किया है चाहे वह हरेरंग की अधिकता हो या कच्चेपन की ही गहराई हो। 'अपनी केवल धार' काव्य संग्रह की 'मई का एक दिन' शीर्षक कविता की एक पंक्ति द्रष्टव्य है –

खून और घावों से पटा शरीर ।।
(कमल 2012:17)

यहाँ कवि ने 'पटा' शब्द का प्रयोग किया है। पटा यानी भरा हुआ। शरीर पर खून और घावों इतने हैं कि ऐसा लगता है मानो खून और घावों से ही शरीर पूरा भरा है। लेकिन यदि कवि पटा के स्थान पर भरा हुआ शब्द का प्रयोग करते तो यह पंक्ति साधारण सी ही लगती।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि अरुण कमल की कविताओं में प्रयुक्त स्थानीय शब्द कविताओं को ऊर्जा प्रदान करते हुए अधिक आकर्षक बनाती है। स्थानीय शब्दों के प्रयोग के कारण उनकी कविताओं में एक नयापन आया है। यह स्थानीय शब्द सम्पूर्ण अर्थ को व्यक्त करने में सक्षम है। यह कवि अरुण कमल की खासियत है कि उनके द्वारा प्रयुक्त स्थानीय शब्द पाठक के समक्ष पूरे स्थानीय माहौल को प्रस्तुत कर देते हैं। अरुण कमल की कविताओं में प्रयुक्त सभी स्थानीय शब्द कवि की भाषिक सजगता तथा संरचनात्मकता का परिचय देती है।

संदर्भ ग्रंथ-सूची :

कमल, अरुण. अपनी केवल धार. नई दिल्ली: वाणी प्रकाशन, 2012.

कमल, अरुण. सबूत. नई दिली: वाणी प्रकाशन, 2004.

सम्पर्क सूत्र :

शोधार्थी, हिंदी विभाग

गौहाटी विश्वविद्यालय

दूरभाष : 7637856100

ई-मेल : rubimoni345@gmaii.com

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5,अंक:8;जनवरी-जून, 2024

भारतीय सिनेमा में नारी (हिंदी और असमीया सिनेमा के संदर्भ में)

अनन्या दास

सिनेमा और साहित्य दोनों ही समाजका दर्पण स्वरूप है। समाज में जो घटनाएँ घटित होती हैं, वे सभी सिनेमा नहीं तो साहित्य में परिलक्षित होती ही हैं। सिनेमा में तो दृश्य और श्रव्य दोनों रूपों मेंही परिलक्षित होती हैं । वस्तुत: सिनेमा समाज को उसकी वास्तविक छवि दिखाकर उसे उसकी अच्छाइयों एवं बुराइयों से अवगत कराता है।

'सिनेमा' को हिंदी में चलचित्र कहा जाता है । साधारण भाषा में सिनेमा शब्द सपने, आकांक्षा, जीवन, मनोरंजन, बदलावों को दर्शाता हैं। सिनेमा और समाज दोनों एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। भारतीय सिनेमा के पितामह दादासाहब फाल्के ने सन् 1913 में अपने पहले सिनेमा 'राजा हरिचन्द्र 'में पुरुष द्वारा स्त्री की भूमिका करवाने के बाद अब तक भारतीय सिनेमा ने लंबी दूरी तय कर ली है। एक समय था जब सिनेमा को स्त्री के लिए उचित तथा सम्मान जनक नहीं माना जाता था । जबकि सिनेमा की लोकप्रियता, पैसा, शोहरत आदि को आज भी महत्व दिया जाता है। सौ साल बाद आज इसमें कुछ परिवर्तन भी आए हैं, लेकिन आज भी स्त्री को कितना सम्मान दिया जाता है यह शोध का विषय हो सकता है। उस समय में 'अपुर संसार' नामक सिनेमा करनेवाली शर्मिला टैगोर को स्कूल छोड़ने के लिए कहा गया था, क्योंकि तब माना गया था कि उनके सिनेमा करने के कारण अन्य लड़कियों में विपरीत प्रभाव पड़ने लगा था। लेकिन अब स्थिति बहुत बदल गयी है। अब सिनेमा जगत में कदम रखना एक गौरव का विषय बन गया है । सिनेमा को अब एक व्यवसाय के रूप में माना जाता है और इस व्यवसाय में लड़का हो या लड़की सभी जुड़ना चाहते हैं।

भारतीय सिनेमा उद्योग विश्व में सबसे बड़ा उद्योग माना गया है। सौ वर्ष की हमारी यह भारतीय सिनेमा में नारी चेतना का स्वर प्रखरता से गूंज उठती है। चेतना परिवेशगत दबावों से उत्पन्न मूल्यपरक इकाई है और

असंतोष, जिज्ञासा दृष्टि उसके मूल घटक है। परंपरा से अलग प्रयत्न करनेवाली नारियों का संसार सिनेमा में प्रत्यक्ष हुआ है। हिंदी सिनेमा की पहली महिला निर्देशिका और मुक फिल्मों की नायिका फातिमा बेगम, तो 'आलमआरा' की जुबेदा बेगम सस्वर फिल्मों की पहली नायिका का गौरव प्राप्त कर चुकी है। तब सेकई नारी पात्र सिनेमा के पर्दे पर प्रत्यक्ष हुईं ।

समाज में समय के साथ संरचना एवं प्रवृत्तियों में लगातार बदलाव होते रहते हैं। इन बदलावों को सिनेमा बखूबी सिल्वर पर्दे पर प्रस्तुत करते हैं। महिलाएँ प्रत्येक समाज का महत्वपूर्ण अंग है। अपनी शुरुआती दिनों से ही हिंदी सिनेमा ने समाज में महिलाओं की स्थिति व उनकी समस्याओं और उनसे जुड़ी कुरीतियों को सिल्वर पर्दे पर उतारकर उन्हें समाज के सामनेचिंतन हेतु प्रस्तुत किया है । कुछ सिनेमाओं ने भारतीय समाज में नारी की वास्तविक स्थिति को सामने लाने का सराहनीय कार्य कियाहै । 'समाज की भूल' (1934), 'इंदिरा एम. ए' (1934), 'देवदास' (1935), 'बालयोगिनी' (1936), 'अछूतकन्या' (1936), 'दुनियाना माने' (1937), 'आदमी' (1939) आदि इसके प्रमुख उदाहरण हैं । 'समाज की भूल' में विधवा पुनर्विवाह के अधिकार का समर्थन किया गयाहै । वस्तुत: इस दौर की फिल्मों ने नारी जीवन से संबंधित विविध समस्याओं तथा बाल-विवाह, बेमेल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा आदि पर अपने को केन्द्रित किया गया है।

स्वतंत्रता के पश्चात हिंदी सिनेमा में नारी के संदर्भ में कुछ और भी परिवर्तन मिलते हैं। वस्तुत: उस समय के समाज में नारी को लेकर जो भी नई विचारधारा उभरकर सामने आ रही थी, उसी का प्रतिफलन हिंदी सिनेमा भी कर रहा था। उस समय सिनेमा में नारी को अति दुर्बल रूप में चित्रित किया गया था।

पाश्चात्य की तुलना में हिंदी सिनेमा में विविधता, गंभीरता, वास्तविकता,साहस वैसे कम पाया जाता है। व्यावसायिकता के चलते सिनेमा पैसा और व्यापारकी भावना से जुड़ गया है। परंपरागत नारी विषयक भावनाओं कोछूने वाले विषयों परभी फिल्में बनी हैं । जहाँ नारी की प्रतिमा कोमल नहीं; बल्कि पुरुष से अधिक सामर्थवाली, पारिवारिक ज़िम्मेदारी उठानेवाली है । जनप्रिय हिंदी सिनेमा 'मदर इंडिया' (1957) की राधा ऐसी कृषक स्त्री है, जो पति के मृत्यु के पश्चात बच्चों को संभालते हुए भाग्य को खुद बनाती है, अत्याचार करने वाले अपने बेटे को स्वयं मारती है। 80 दशक की पारिवारिक फिल्मों

में परंपरागत स्थिति के विरुद्ध विद्रोही एवं परिवर्तनवादी नारी का चित्रण होने लगा। बहिर्विवाह के सम्बन्धों पर आधारित 'अर्थ' (1982) नारी जीवन के आंतरिक संघर्ष को प्रस्तुत करता है। घर का सपना देखनेवाली पूजा का पति इंदर मानसिक रूप से अस्थिर कविता के लिए उसे छोड़ देता है। 'एक चादर मैली सी' (1986) फ़िल्म परम्पराओं से उभरनेवाली नारी समस्या को दर्शाती है। ग्रामीण रानो दो बच्चों के बावजूद दहेज के लिए सास से प्रतड़ित है, शराबी पति से पीटती है।

20वीं सदी में जिस तरह बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में आंचलिक रूप में भारतीय सिनेमा का निर्माण तथा प्रचार चल रहा था, उसी समय असमीया सिनेमा का निर्माण का काम चल रहा था, लेकिन असमीया सिनमाका इतिहास इनसे अलग था। ज्योतिप्रासाद अग्रवाल ने सन 1935 में 'जयमती' नामक प्रथम असमीया सिनेमा का निर्माण किया था और जयमती का निर्माण सबाक शैली सेकिया गया था। इससे ही हमें ज्ञात होता हैं कि असमीया सिनेमा प्रारम्भ से ही सबाक रूप में था। सबाक को असमीया भाषा में 'कथाछवि' कहा जाता है, कथा अर्थात् बात-चीत और छवि का अर्थ है-सिनेमा। ठीक उसी तरह विषय शैली की दृष्टि से भी असमीया सिनेमा अन्य भाषाओं के सिनेमा से अलग था, क्योंकि उस समय मराठी, बांग्ला, तामिल और तेलेगु भाषा के सिनेमाओं में विषय के रूप में सिर्फ पौराणिक तथा आध्यात्मिक कहानियों का ही प्रयोग होता था और वहाँ दूसरी तरफ प्रथम असमीया सिनेमा की कहानी समाजकेंद्रिक तथा ऐतिहासिक थी। यह सिनेमा असमीया समाज जीवन की प्रतिच्छवि स्वरूप है। भारतीय सबाक सिनेमा जगत में दक्षिण के सिनेमा 'भक्त प्रह्लाद' (1931) हो या मराठी सिनेमा 'अयोध्यानरेश' (1932) हो, उसी समय सबाक सिनेमा जगत में असमीया सिनेमा जयमती ने एक अलग दिशा दिखाई। 'जयमती' निर्माण के समय ज्योतिप्रसाद अग्रवाल रूस के वास्तवमुखी चलचित्र चर्चा से प्रभावित थे।

'जयमती सिनेमा' से असमीया सिनेमा जगत ने वर्णिल यात्रा अतिक्रम किया है। 'जयमती' सिनेमा से ही असमीया सिनेमा जगत में नारिकेन्द्रिक सिनेमा का आरंभ हुआ था। नारी की मानसिक अवस्था, उनके आवेग, अनुभूति को लेकर काफी असमीया सिनेमाओं का निर्माण हुआ है। इसके कुछ उदाहरण हैं – 'जयमती' (1935), 'इंद्रमालती' (1939), 'अपरूपा' (1987), 'फिरिङति' (1992), 'लाज' (2004) आदि।

'जयमती' सिनेमा में नायिका जयमती अपने पति के प्रति जो अपनापन, प्रेम और जिम्मेदारी रखती थी, उसका प्रतिफलन हुआ है । जयमती की कहानी 17वीं शताब्दी के इतिहास के एक अध्याय को केन्द्रित करके लिखा गया था। आहोम शासन के बारें में इस सिनेमा में देखा जा सकता है । लरा राजा अर्थात् किशोर राजकुमार जब शासन संभालता है, तब राज्य के सभी पुरुष, जो राजाबनने के काबिल हैं, उनके शरीर में कुछ छोट पहुचाने का आदेश देता है, जिससे वे भविष्य में राजा नहीं बन पाएंगे । उनके सिपाहियों से बचने के लिए जयमती अपने पति गदाधर सिंह को दूसरी जगह भेज देती है और चौदह दिनों तक अत्याचार सह कर भी अपनी पति का पता नहीं देती है और अन्त में उसकी मृत्यु हो जाती है। 'जयमती' सिनेमा की मूल नायिका थी आइदेउ संदिकै। इस सिनेमा को करने के बाद आइदेउ संदिकै को अपने गाँव से अलग कर दिया गया था और उनसे किसी ने शादी भी नहीं की थी । 'इंद्रमालती' सिनेमा एक प्रेम कहानी है। इस सिनेमा में नायक के साथ-साथ नायिका मालती को भी प्रधानता मिली है। ज्योतिप्रसाद अग्रवाल पहले फिल्म निर्माता थे, जिन्होंने नायक-नायिका के नाम से सिनेमा का नामकरण किया था । 'अपरूपा' सिनेमा में नायिका को समाज की कुरीति से मुक्त करने का प्रयास किया गया है । 'फिरिङति' सिनेमा में नायिका रूनू ने अशिक्षित होने के बाद भी अपने कर्म से अपनी पहचान बनायी है और समाज के नियमों में परिवर्तन लाती है।

उपरोक्त विश्लेषण से हमें पता चलता है कि हिंदी तथा असमीया सिनेमा ने भारतीय नारी की सामाजिक स्थिति को काफी अच्छी तरह से सिल्वर पर्दे पर उतारा है । वस्तुत: सिनेमा ने समाज के परिवर्तनशील स्वरूप को तथा नारी की परिवर्तन को भी बरकरार रखा है। इसी तरह आने वाले दिनों में भी सिनेमा समाज तथा नारी के प्रति हमारे दृष्टिकोण को सुलझाते रहे और आने वाले दिनों में समाज के विषयों को और प्रासंगिक बनाकर रखें।

सहायक ग्रंथ :

कोरे,सुलभा.भारतीय समाज हिंदी सिनेमा और स्त्री.अंतिका प्रकाशन,2021

गुप्त,डॉ. चंद्रभूषण'अंकुर'.सिनेमा और समाज. शशि प्रकाशन.2012

संपर्क-सूत्र :
शोधार्थी,
हिंदी विभाग, असम विश्वविद्यालय,
दीफू परिसर
दूरभाष : 8638618390

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक: 8; जनवरी-जून, 2024

असम की राभा जनजाति के वाद्ययंत्र

बरषा राभा

पूर्वोत्तर भारत का एक प्रधान राज्य है असम। असम विभिन्न जाति-जनजातियों की मिलनभूमि रही है। भिन्न जातियों की भिन्न-भिन्न कला-संस्कृति, रहन-सहन, खान-पान, भाषा आदि ने असम के सौन्दर्य को अनन्य मात्रा प्रदान किया है। यहाँ की प्रत्येक जनजाति स्वकीय संस्कृति में अपना स्थान अलग रखती है। राभा जनजाति असम की प्रमुख जनजातियों में एक है। राभा जनजाति नृत्य-गीत जैसी प्रदर्शन कलाओं में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। नृत्य और गीत का अभिन्न अंग है- वाद्ययंत्र। इस दिशा में राभा जनजाति का स्वतंत्र और अलग पहचान है।

हृदयानुभूतियों को प्रकट करने का प्रधान माध्यम है गीत। गीतों के माध्यम से मनुष्यों के मन की बात, प्राणों की अनुभूति की अभिव्यक्ति होती है। वाद्य गीतों का सौष्ठव बढ़ाने में प्रधान भूमिका निभाते हैं। वाद्य ही गीतों का ताल रक्षा करके मधुर और लालित्यपूर्ण बनाने में सहायक बनते हैं। इसलिए गीत और वाद्ययंत्र के बीच एक गंभीर संबंध है। जहाँ गीत होते हैं, वहाँ वाद्ययंत्र जरूर रहते हैं। प्रत्येक जाति के जीवनयापन करने की पद्धति अलग-अलग होती है। मनुष्यों के जीवन के प्रत्येक भाव और विचार,सुख-दुःख, अनुभूति का गहरा संबंध सामाजिक रीति-नीति और उत्सव-त्योहारों से है। जिन्दगी के खट्टे-मीठे अनुभवों को लोग नृत्य-गीत के द्वारा अभिव्यक्त करते हैं। किसी भी जाति को जानने-परखने का सबसे महत्वपूर्ण जरिया है उस जाति की लोक-संस्कृति।

राभा जनजाति की संस्कृति की ओर देखे तो उनके विविध उत्सव, खेल-कूद, पूजा-अर्चना, जन्म-मृत्यु, विवाह, श्राद्ध कर्म आदि सभी को अलग-अलग रीति-रिवाजों, परम्पराओं के साथ पालन किया जाता है। प्रत्येक कार्यक्रम में नृत्य-गीत की अनिवार्यता देखी जाती हैं। नृत्य-गीतों के साथ वाद्ययंत्र की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। राभा

जनजाति के वाद्ययंत्र को प्रधानतः चार भागों में विभक्त किया जाता हैं- 1. अनवद्ध वाद्य,2. घन वाद्य, 3.सुषिब वाद्य और 4. ओत वाद्य।

1. अनवद्ध वाद्यः इन्हें मिट्टी,बाँस, लकड़ी अथवा किसी धातु से निर्मित किया जाता है। जैसे-

(क) खाम, हेम या ढाक (ढोल जैसे) : गमारि, पमाजिया, निउरि चेङ, घोड़ा निम, कटहल आदि पेड़ों की लकड़ी से 2-2.5 मीटरलम्बा,एक ओर 7-8 इंच बड़ा, दूसरी ओर 4-5 इंच बड़ा माप में एक ओर बकरी की खाल, दूसरी ओर हिरन की खाल लगाकर, बेंत के दोवानों (दोनों ओर से खींचने की डोरी) को जोड़कर खाम, हेम या ढाक तैयार किया जाता है।

(ख) छोट ढाक या ढोल (बिया ढोल) : यह वाद्य 1-1.5 मीटर लम्बा और बड़े पेड़ों के टूकरों को काटकर, दोनों ओर बकरी के चर्म और बेंत के दोवान खींचकर बनाया जाता है।

2. घन वाद्य यंत्र : कठिन धातु से निर्मित ताल जैसा वाद्य यंत्र।

(क) दायदि/ तेंतक (तेंबाति) : काँसा या पीतल द्वारा इसे निर्मित किया जाता है। राभा लोक-नृत्य करते समय गीतों के ताल सही रखने के लिए यह वाद्य बजाया जाता है।

(ख) खुति ताल : यह काँस या पीतल से निर्मित एक वाद्य है। राभा जनजाति के श्राद्ध कर्म में मृतक की आत्मा की सद्गति के लिए इस वाद्य को बजाया जाता है। 'मारै पूजा'में ओजापालि नृत्य की ताल पर इसे बजाया जाता है।

3. शुषिब वाद्यः इसके अंतर्गत बंशी, पेपा, शिङ जैसे वाद्य आते हैं।

(क) छिंगा या छिङ : इस यंत्र को भैंस के शिंग से तैयार किया जाता है। पूजा के समय, नृत्य-गीत गाते समय, कई लोगों के साथ बिल

अथवा नदी में मछली पकड़ने जाने से पहले, किसी सभा की सूचना देने के लिए, गाँव में किसी संकटकाल आते समय गाँववालों को सावधान और सतर्क करने के लिए, युद्ध में जाते समय इस वाद्य को बजाया जाता है।

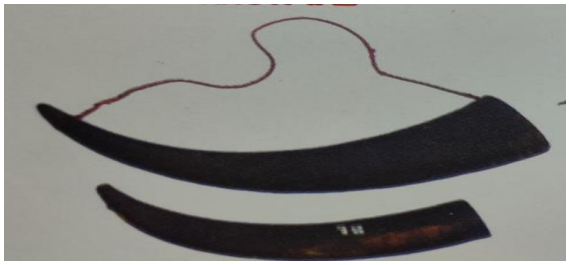

(ख) मुख ब्रांछि(मुख बंशी) : जाति बाँस अथवा नल (ईख) बाँस द्वारा एक हाथ लम्बा करके बनाया गया एक बंशी। इस बंशी के छः छेद होते हैं।

(ग) कारानल या कारा ब्रांछि : यह बंशी 5/6 फीट लम्बे नल बाँस से तैयार किया जाता है। बाँस की गांठों को छड़ी से खोला जाता है। फूंकने के लिए बाँस के सामने से गांठे काट दी जाती है और दूसरी तरफ ध्वनि की गहराई बनाई रखने के लिए 6 इंच के गांठदार बाँस की छड़ी लगाई जाती है। इस वाद्य यंत्र को हर कोई नहीं बजा सकता, यदि आप तकनीक सीखेंगे तो ही इसे बजाने में सक्षम हो सकते हैं।

(घ) झापकारा ब्रांछि : इस प्रकार की बासुरी को बाँस के छोटे से लेकर बड़े व्यास के टुकड़ों को एक विशेष तरीके से जोड़कर कारानल जैसे ही बनाई जाता है। यहाँ तक कि इस झापकारा को कारानल बजानेवाले भी नहीं बजा सकते, इसे बजाने का एक अलग तरीका है। कारानल की तरह इसमें कोई छेद नहीं होता। यदि बाँस को मजबूती से जोड़ा नहीं जायेगा तब यह वाद्ययंत्र नहीं बजेगा।

(ङ) लाखर ब्रांछि : ये लाखर बंशी आमतौर पर देव बाँस से बनायी जाती है। लगभग 2/1.5 फीट लंबे बाँस के टुकड़े को बाँस की त्रिज्या के

छोटे या छोटे हिस्से पर कुछ गांठ लगा दी जाती है । बड़े त्रिज्यावाले सिर की गांठ को काट दिया जाता है और टुकड़े के ठीक बीच में एक छेद कर दिया जाता है । यहाँ केवल एक ही गाना बजाया जा सकता है - 'लाखर गरु मिल ओ माटि आनछूराय ओ गुइ'.....

(च) सुतलि या नाला गुंलाय : यह बासुरी की तरह लगभग 4/5 इंच चौड़ी मिट्टी या केकड़े की मिट्टी से बना होता है । यहाँ तीन छेद किए जाते हैं । चरवाहा इस वाद्ययंत्र को बजाता है ।

(छ) बुबुरेङा या बुबुरिङा : 'बताबन' या 'तङाबन' की एक शाखा को लगभग आधे हाथ में काटा जाता है । जब इसे एक तरफ से छेदकर फूंका जाता है, तो इससे मधुर 'रौ-रौ' ध्वनि निकलती है ।

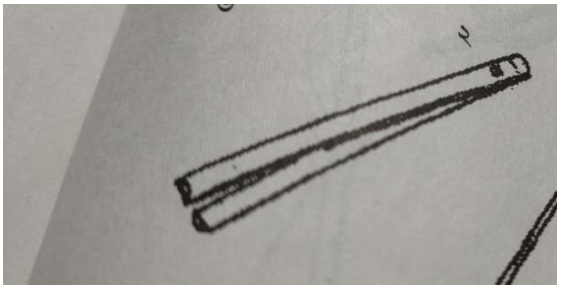

4. तत वाद्य : तारों से निर्मित वाद्य यंत्र

(क) बादुंदुप्पा - बड़ा नल (ईख) बाँस से बना हुआ एक वाद्य । बाँस के ऊपरी भाग से बाँस के एक टुकड़े पर दोनों तरफ गांठें लगाकर दो तार बनाए जाते हैं, हालाँकि इन्हें दोनों तरफ की गांठों से छोड़ना नहीं पड़ता है । फिर दोनों तारों के नीचे बाँस के टुकड़े के ठीक बीच में 1.5/2 इंच का एक चौकोर छेद बनाया जाता है और तारों को एक साथ पकड़ने के लिए छेद को दोनों सिरों पर बाँस की शीट काटकर ढक दिया जाता है । इस वाद्य यंत्र का उपयोग प्राचीन काल में पुजारियों द्वारा मंत्र पाठ करते समय होता था ।

(ख) गमेना : यह वाद्य यंत्र बाँस या किसी धातु से बनाया जाता है। इसे मुँह से बजाया जाता

है। इसे बजाने में ऊंगली, जीभ और मुँह की विशेष तकनीक की आवश्यकता होती है।

राभा जनजाति की संस्कृति पर चर्चा करते समय सबसे पहली बात जो दिमाग में आती है वह है उनके त्योहार, खेल, विवाह, श्राद्ध कर्म, नृत्य-गीत, वाद्य आदि। इनके बिना उनकी संस्कृति का स्वरुप निर्धारित करना कठिन है। बाजार में कई तरह के संगीत वाद्य यंत्र उपलब्ध हैं, फिर भी किसी जाति या जनजाति के लोकवाद्य हमेशा से ही विशेष भूमिका निभाते आ रहे हैं। गीत-वाद्य के बिना संस्कृति अधूरी और रसहीन हो जायेगी।

संदर्भ-सूचीः

राभा, मणि. राभा संस्कृतिर धारा. द्वितीय. दुधनै: बाण्ठों लाइब्रेरी,2005

राभा, मणि. प्रबंध संग्रह. प्रथम. दुधनै : बाण्ठो लाइब्रेरी, 2006

राभा, धनन्जय. राभा जनजातिर चमु इतिहास. प्रथम. गुवाहाटी: बह्निमान प्रिण्टार्ड्स, 1998

रंख, कुशध्वज (संपा). राभा समाजर सामाजिक आइन आरु दण्डबिधि.

Rabha, Rajen. The Rabhas. First. Panbazar : Cambridge India, 2010

संपर्क सूत्र :

अतिथि प्राध्यापक

हिंदी विभाग, छयगाँव महाविद्यालय

ई-मेल :barasha2018@gmail.com

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक: 8; जनवरी-जून, 2024

सीमा-रेखा

सारा राय

एकदम से वह दरवाज़े से बाहर निकली. दूर से आयी हुई कोई प्रवासी चिड़िया.

"अगर मैं तुम्हें न पहचानूँ तो बुरा मत मानना!" उसने आते ही कहा.

सफ़ेद दरवाज़ा मैला होकर सफ़ेद नहीं रह गया था. सफ़ेद दरवाज़ा सफ़ेद नहीं था, मगर उसके ऊपर रंगा बड़ा सा लाल गोला लाल था. मुन्नी ने दरवाज़ा बंद किया तो उसके दोनों पट आकर मिल गये. गोला तब आधा नहीं, पूरा दिखने लगा. मुझे वह याद था. चालीस साल में उसका रंग फीका नहीं पड़ा था. यह बीचवाले गोल कमरे का मुख्य दरवाज़ा था. कमरे के दोनों तरफ़ दो छोटे दरवाज़े भी थे. उनपर भी लाल गोलाबना था, थोड़ा छोटा और दरवाज़े के बाहर वह धूल भरा सीमेंट की फ़र्श वाला बरामदा, जहाँ बैठकर मुन्नी की मैया उसके चेहरे पर मलाई रगड़ती थीं, कि इस तरह वह गोरी हो जायेगी. मुन्नी का रंग पक्का था, बिल्कुल नहीं बदला था.

उसकी ख़ाली ख़ाली सी आँखें मेरे चेहरे पर आकर ठहरीं. लम्बा सफ़र करने के बाद अंदाज़ा लगा रही हों, कि कहाँ पहुँची हैं. उसके बराबर के पीले दाँतों पर कलौंछ छा गयी थी. नीचे वाली क़तार में दो दाँत ग़ायब थे. एक काली सी अनुपस्थिति, जो कि दाँतों के आकार की गुफ़ा जैसी लगती थी. उसके कत्थई होंठ बीच से हल्के गुलाबी होकर, एक छोटी सी चोंच में मिल गये थे. मुझे फिर प्रवासी चिड़िया का ख़्याल आया. चिड़िया का नाम फ़िलहाल याद नहीं आ रहा था. उसका शरीर सिकुड़कर और छोटा हो गया था, जबकि मुझे पहले से ही वह छोटी सी याद थी.

"मुझे माफ़ करना. मेरी याददाश्त गड़बड़ा गयी है." क़रीब आकर उसने अपनी बाँह मेरी बाँह में फँसा ली. वह मुश्किल से मेरे कंधे तक आती थी.

"मगर तुम्हें तो मैं जानती हूँ," फिर उसने ख़ुशी से कहा.

"मुझे बहुत पुरानी बातें याद रहती हैं, जबकि मैं कल की, पिछले घंटे की बातें भूल जाती हूँ. मेरा इलाज चल रहा है."

मेरा ध्यान बार बार उसके ग़ायब दाँतों पर चला जाता था. पिछली बार जब हम मिले थे, तब भी उसने ठीक यही कहा था.

"माफ़ करना अगर मैं तुम्हें न पहचानूँ. मेरी याददाश्त गड़बड़ा गयी है. मगर तुम्हें तो मैं जानती हूँ!"

वह बीस साल पहले था.अपने घर के सामने वह रिक्शे से उतर रही थी. एक पीली सी इमारत, जिसकी दीवारों पर काई की काली काली झाईं छा गयी थी. फाटक के दोनों खम्बों पर नुकीले दाँत दिखाते हुए पत्थर के शेर. इमारत की ऊँची दीवार पर, लगभग छत के ही पास गहरे, अंधे रौशनदान थे. बरसों से उनके शीशों पर दाग़ लगते लगते उनका रंग बदल गया था. वे पीले पड़ गये थे. ज़्यादा रौशनी अन्दर नहीं जाती होगी. इस घर में कभी जूनागढ़ के राजकुमार रहा करते थे. राजकुमार पढ़ाई करने के लिये इलाहाबाद विश्वविद्यालय आये थे. इसी घर में रहकरबी. ए. की पढ़ाई पूरी कर लेने के बाद, वे अपने प्रदेश वापिस चले गये थे. मुन्नी के पिता को राजकुमार ने घर की देखरेख करने के लिये नियुक्त किया था. राजकुमार के जाने के बाद उन्होंने घर का क़ब्ज़ा नहीं छोड़ा, मगर उसकी सफ़ाई सुथराई में ढीले पड़ गये. इस लापरवाही का नतीजा उन दिनों ही दिखता था. अब घर कुछ और ज़्यादा ढह गया था.

"माफ़ करना अगर मैं तुम्हें न पहचानूँ. मेरी याददाश्त गड़बड़ा गयी है. मगर तुम्हें तो मैं जानती हूँ!" रिक्शे से उतरकर उसनेकहा था.

कुछ नहीं बदला था. छत की खपरैलें बस थोड़ी और खिसक कर टूट गयी थीं. घर तक जाते हुए कंकरीले रास्ते के किनारे अब भी वह ठिगने से खम्बे मौजूद थे, जिनका मसरफ़ कभी समझ में नहीं आया. उसी रास्ते पर हम टहला करते, एक खम्बे से दूसरे खम्बे तक,आगे पीछे आगे पीछे, मख़मली काई से ढकी चार दीवारी के बग़ल में. वे खम्बे, क़रीब दो फ़ुट की ऊँचाई और उनके सिर पर बिल्कुल गोल, फ़ुटबाल नुमा पत्थर, आधी शताब्दी गुज़रने के बाद भी वैसे ही थे. अपनी निश्चलता के सदा रुके हुए पल में जैसे एकाएक अभिशप्त. बरसों तक असर करता हुआ शाप, जिसने उन्हें पत्थर की बूढ़ी जादूगरनियों में बदल दिया था, अनचक्के में अपने ही उलटे जादू की कोसी हुई. सड़ते अमरूदों की नशीली गन्धचारों तरफ़ फैलकर हमारी नाक में बस जाती. पेड़ों के नीचे पीले पके अमरुद बिछे रहते, जिनके ऊपर चमकदार हरे रंग की मक्खियाँ और भुनगे छोटे-छोटे विमानों की तरह भुनभुनाते.

टहल-टहल कर हम स्कूल की बातें करते. मुन्नी मेरे साथ उसी स्कूल में, उसी कक्षा में तो पढ़ती ही थी, हमारे घर भी अगल बग़ल थे. उसका स्कूल का नाम संगीता था, मगर वह मुन्नी ही कहलाती थी. वह छोटी सीथी भी. हम इलाहाबाद के एक मिशनरी स्कूल में पढ़ते थे, जहाँ के अधिकतर क्लास जर्मनी या केरल से आयी, सफ़ेद चोग़ा पहने, कोई न कोई कैथोलिक 'नन' लेती थीं. मेरे भाई और अशोक हमारे स्कूल के 'ब्रदर' स्कूल में पढ़ते थे. अशोक मुन्नी का भाई था. 'नन' अध्यापिकाओं को हम उनके दर्जे के हिसाब से, 'सिस्टर' या 'मदर' कहते. उनके क़िस्से सुनाकर मुन्नी इतना हँसती कि हँसी की वजह से समझ में नहीं आता कि वह क्या कह रही है.

उसने उनके रहने वाले कमरे के बाहर, अलगनी पर टँगा एक बहुत बड़े साइज़ का अंदर पहनने वाला ब्रासियर देखा था. उसने 'ब्रा' के बारे में बताया, तो ब्रा के अंदर छुपे हुए अंगों का हमें ध्यान आ गया कि एक 'नन' के शरीर में भी यह अंग होते हैं. पता नहीं क्यों इस बात से हम आश्चर्यचकित हो गये. मगर हँसी भी बहुत आयी. उन दिनों हमें हर चीज़ पर हँसी आती थी.मुन्नी हँसती तो उसकी गोल बटन जैसी नाक सिकुड़कर ऊपर चढ़ जाती. आँखें चमकने लगतीं. काले रंग के रिबन से बँधी उसकी कंधे तक आती दो पतली-पतली चोटियाँ हिल हिल कर उसकी हँसी का समर्थन करतीं. स्कूल में 'पी.टी.' का क्लास ख़तम होने पर, अपने सफ़ेद कैनवस के जूते पहने, हम देर तक मौलश्री के पेड़ों के नीचे, ख़ामोशी से एक दूसरे के पैर पर चढ़कर उन्हें दबाने का खेल खेलते. सफ़ेद जूते मिट्टी के रंग के हो जाते. स्कूल में सब मौलश्री को 'चोकी प्लम' कहते थे.

मुन्नी के घर के बाहर वही मामूली सी सड़क अब भी थी. सड़क ज़्यादा चलने लगी थी. भारतीय स्टेट बैंक की एक शाखा सड़क के उस पार खुल गयी थी. मोटर और स्कूटर की तादाद बढ़ गयी थी, रिक्शों की घट गयी थी. मैंने देखा कि फाटक के दाहिने तरफ़ जहाँ बैडमिंटन कोर्ट हुआ करता था, अब हरी घास की पट्टी थी. तब, जब बैडमिंटन कोर्ट था, बैडमिंटन खेलने की इतनी हड़बड़ी रहा करती, कि कभी कभी स्कूल का ड्रेस बदले बग़ैर ही मैं खेलने पहुँच जाती. रैकेट से मारने पर बैडमिंटन की सफ़ेद पंखों से बनी चिड़िया हवा में तैरती हुई कोर्ट की दूसरी तरफ़ जाकर गिर जाती. जब वह हवा में रहती तो मुझे लगता कि वह कोर्ट के दूसरी तरफ़ नहीं,पंख फैलाकर उड़ती हुई कहीं दूर चली जायेगी. मुन्नी के घर के ठीक सामने, सड़क के

उस पार आस्था अस्पताल भी खुल गया था. सुबह से अस्पताल के सामने मरीज़ों की लाइन लग जाती. कभी सफ़ेद चादर ओढ़े हुए लोग स्ट्रेचरपर लेटे बाहर खड़ी एम्बुलेंस के अंदर किये जाते, या अंदर से बाहर निकाले जाते. लगता कि बस ज़रा सी दूर खड़ी,मौत मुन्नी के घर पर आँख गड़ाये हुए है.

जब इसी सड़क पर हम साइकिल चलाते हुए स्कूल जाया करते थे, तब यहाँ पेड़ों से ढका पुरुषोत्तम का बंगला होता था. उसके खुले फाटक से गाय अंदर घुसकर बग़ीचा चबा जाती. बूढ़े पुरुषोत्तम लंगड़ाते हुए बाहर निकलकर गाय को हँकाते. बंगला बंजर और वीरान लगता था.सड़क सुनसान रहा करती. आगे चलकर सड़क के एक तरफ़ कैथे के पेड़ आ जाते. स्कूल से लौटते समय हम साइकिल से उतर,ढेला चलाकर सफ़ेद पक्के कैथे गिराने की कोशिश करते. स्कूल जाते हुए, घर के सामने मेरे तीनों भाई साइकिल धीमी करके चिल्लाते "अशोक! अशोक!" कि अशोक भी साइकिल लेकर निकलेगा कि नहीं. अशोक कभी निकल आता, कभी नहीं. जब निकल आता तो उन चारों की साइकिलें पूरी सड़क छेक लेतीं. हवा उनकी आसमानी रंग की स्कूली कमीज़ के अंदर घुस जाती और वे ग़ुब्बारे की तरह फूल जातीं. उनके बाल हवा में पीछे को बहने लगते.

मुन्नी के तबाही की ओर फिसलते हुए घर के बड़े से हाते का पिछवाड़ा हमारे घर के सामने के बग़ीचे और अंदर की सड़क से मिल जाता था. हमारे घर का हाता भी बड़ा था. अंग्रेज़ों के बनाये उस ज़माने के सभी इलाहाबाद के बंगलों के साथ ढेर सारी ज़मीन रहा करती थी. दोनों घरों के बीच दीवार नहीं थी. सिर्फ करौंदे की कँटीली झाड़ियों की लम्बी सी क़तार निशानी थी कि एक हाता कहाँ ख़तम होता है और दूसरा कहाँ शुरू. बराबर आवाजाही की वजह से झाड़ियों के बीच से एक हरी सुरंग जैसी बन गयी थी. पेट के बल रेंगकर, काँटों से छिलती हुई, मैं झाड़ियों की दूसरी तरफ़, उसके घर के हाते में निकल आती. वह मेरे घर कम आती थी. वे लोग अग्रवाल थे. उनकी रसोई में लहसुन प्याज़ का इस्तेमाल नहीं होता था. उसके पिता को शायद डर रहा हो कि हमारे घर आकर वह माँस मछली न खाने लगे. हो सकता है वे उसे आने से रोकते हों, जबकि ऐसा किसी ने कभी कहा नहीं. मुन्नी अपने पिता को बाबूजी कहती थी, मगर जब हम आपस में उनकी बात करते, तो वह उन्हें 'डैड' कहती. पता

नहीं वह ग़ुस्सैल थे या नहीं, मगर शकल से ग़ुस्सैल दिखते थे.

यह उसके घर का पिछवाड़ा होने की वजह से,पहले से ही नष्ट हाते की देखरेख बिल्कुल ही नहीं होती थी. झाड़ियों में से पेट के बल निकलते ही, मैं रेड़ के उलझे हुए जंगल के बीच होती. रेड़ के दरख़्त ऊँचे नहीं थे, मगर घने थे. साँझ के वक़्त रेड़ के जंगल में ख़रगोश, सियार और एकबार लोमड़ी दिखी थी. वहीं पर आम के एक धूल से लदे पेड़ पर से मैंने बिज्जू को उतरते देखा था, बस एक झलक भर. उसकी दुम झाऊ के पेड़ की डंगाल की तरह थी. दुम के रोएँ खड़े हुए थे. रेड़ के बड़े-बड़े पत्ते हाथ से झलने वाले पंखों की तरह लगते थे. हवा चलती तो उनमें से कराहने और फुसफुसाने की आवाज़ें आतीं. हवा अपने हाथों से पंखा झल रही है, मैं सोचती. अकसर लोग रेड़ का पत्ता माँगने आते थे. कई रोगों के इलाज में वे काम देते थे.

पीछे से होती हुई मैं घर के सामने पहुँची, तो मुन्नी बाहर नहीं थी. उसके पिता कटी बाँह की सफ़ेद बन्यान और ढीली मोरी का पयजामा पहने अपनी मोटरसाइकिल का मुआइना कर रहे थे. बन्यान एकदम सफ़ेद होने के कारण, उनका साँवला रंग और भी साँवला लग रहा था. मैं उसके पिता से घबराती थी. एक बार मैंने सोचा कि लौट जाऊँ, मगर उन्होंने मुझे देख लिया था. उनके हाथ और सीने पर घने बाल थे. एक हाथ में वह स्टेनलेस स्टील का कड़ा पहनते थे. चेहरा धूप से तमतमाया हुआ था. गर्मी के दिन थे.

"नमस्ते! मुन्नी है?" वे कम बोलते थे. उन्होंने पहले सिर नीचे किया, फिर ऊपर, कि वह अंदर है.

गोल कमरा ठंडा था, और अँधेरा. उसमें चौड़े हत्थे वाले बड़े बड़े सोफ़े रखे थे जिनके हल्के रंग की वजह से वे अँधेरे में दिख रहे थे. आगे बढ़ी तो देखा कि सोफ़े पर उनके दो एल्सेशियन कुत्ते, टाइगर और लिली, गहरी नींद में सो रहे थे. लिली ने मेरी आहट पाकर दुम हल्की सी हिलायी. टाइगर सोता रहा. गोल कमरे के बाद मैया की पूजा वाली कोठरी थी. ताक़ पर सुनहरी किनारी वाला लाल कपड़ा बिछा था. उसपर बहुत सारे भगवान सजे थे. श्री रामचरित मानस और दो तीन अन्य मोटी मोटी धार्मिक पुस्तकें नीचे एक छोटी मेज़ पर रखी थीं. मैया इन में से रोज़ डेढ़ दो घंटे का पाठ करती थीं. भगवान की मूर्तियों की झाड़पोंछ मुन्नी करती थी.सिर्फ़ एक बार मैंने उसको मैया के साथ पूजा करते देखा था. वह चौपल्थी मार के बैठी थी. उसने फ्रॉक

फैलाकर घुटनों को ढक लिया था.धूप बत्ती का धुँआ छोटे से कमरे में भर गया था. धूप बत्ती की महक तो थी ही, मगर पूरे घर में बासी दूध की सड़ती हुई गन्ध भी थी.उसके बाद भगवान की मूर्ति देखकर हमेशा मेरी नाक में सड़ते हुए दूध की महक आती.

अंदर आकर सब तरफ़ देख लिया मगर मुन्नी नहीं दिखी. मैया पूजा घर के पीछे वाले कमरे में बैठी पुराने चिथड़ों से कुछ सी रही थीं. कोई खिलौना. शायद कपड़े के ख़रगोश का कान हो, या गिलहरी.

"क्या सी रही हैं, मैया?" मैं भी उन्हें मैया कहने लगी थी. वह मुझे बेटी की तरह मानती थीं. दीपावली की रात जब वह काजल पारती थीं, तो मेरे लिये एक डिबिया ज़रूर अलग रखतीं. उनका गोरा, पतला सा चेहरा ख़ून की कमी से सफ़ेद हो रहा था.

"हेलीकाप्टर!" उन्होंने जल्दी से मेरी तरफ़ देखते हुए कहा. वह हेलिकाप्टर की तरह नहीं लग रहा था.

मुन्नी घर के एकदम पीछे वाले बरामदे में सीमेंट की मुंडेर पर चुपचाप बैठी रेड़ के जंगल को देख रही थी. मैं थोड़ी देर पहले वहाँ से गुज़री थी मगर मुझे वह नहीं दिखी थी. इसका कारण था कि रास्ते में एक बड़ा सा नीम का पेड़ था. पेड़ को अमरबेल ने जकड़ लिया था और उससे लटकती बेल की लम्बी लम्बी रस्सियों के आर पार कुछ नहीं दिखता था. उसके बग़ल में चार पाँच फुट ऊँची छोटी सी दीवार में नल लगा हुआ था. नल हमेशा सूखा रहता था. उसे खोल दो तो उसमें से सूँ सूँ की आवाज़ आती, निकलता कुछ नहीं था. अमरबेल की रस्सियों पर हम झूला करते. मुन्नी झूलने के मूड में नहीं लग रही थी.

"मैं बीमार हूँ. शरीर का सारा ख़ून बहा जा रहा है," मुझे देखकर उसने मरते हुए से अंदाज़ में कहा. उसका चेहरा उतरा हुआ था. मैंने उसका माथा छू के देखा. लगा हल्की सी

हरारत है. मगर कोई ख़ास नहीं थी.

"कहाँ है ख़ून? "मैंने पूछा. उसे लगा मैंने उसकी बात पर विश्वास नहीं किया. उसने अपने शरीर को मुंडेर पर रगड़ते हुए बायीं तरफ़ थोड़ा घसीटा. सचमुच मुंडेर की सीमेंट पर गहरे कत्थई रंग का निशान बन गया.

"यह कैसे हुआ? चोट है?दिखाओ कहाँ है," मैंने कहा. वह मुंडेर पर पीछे खिसक कर अधलेटी सी हो गयी.उसने अपनी फ़्राक ऊपर करके मुझे दिखाया. फ़्राक के नीचे वह नीले रंग की जाँघिया

पहने थी. जाँघिया पर फूल बने थे. वह सफ़ेद नाड़े से बँधी थी. फूलों के बीच ख़ून का धब्बा भी फूलों में मिल गया था. धब्बा किसी और जाति के फूल की तरह लग रहा था.

"मैया ख़ून को रोकने के लिये नैपकिन सी रही हैं. कहती हैं अब यह हर महीने होगा," उसने हताशा से कहा.

"नैपकिन! कह रही थीं हेलीकाप्टर है." उसने तिरस्कार भरी नज़र मेरे ऊपर डाली, जैसे कि मैं कितनी बेवक़ूफ़ हूँ.

"सब लड़कियों को होता है. तुम्हें छू दूँ, तो तुम्हें भी हो जायेगा."

"मुझे मत छूना." मैंने थोड़ा पीछे हटते हुए कहा.

"नहीं छू रही हूँ."

"टाइगर! टाइगर!" अशोक आ गया था. उसने ज़ोर से सीटी बजायी. टाइगर उसे सुन कर दौड़ा हुआ आता था. मगर टाइगर नहीं आया. टाइगर अशोक का दुलारा कुत्ता था. वह जंगल में गेंद फेंकता और टाइगर उसे मुँह में दबाकर वापिस ले आता. लिली से उसको उतना प्रेम नहीं था. लिली बूढ़ी हो गयी थी. अशोक के टाइगर-प्रेम और उसके टाइगर को सीटी बजाकर बुलाने की आदत के कारण मुन्नी अशोक को टियु कहने लगी थी । उसकी सीटी टियु टियु करके बजती थी । अब सभी उसे टियुकहते थे. अजीब सा नाम था, पर चिपक गया.

"टियु, वह अंदर गोल कमरे में सो रहा है. अभी आते में मैंने उसे देखा था," मैंने कहा. अशोक बिल्डिंग के बग़ल से होता हुआ फिर घर के आगे की तरफ़ चला गया.

मुन्नी की अस्थिर आँखें मुझ तक लौट आयीं.

"एक बात कहूँ, किसी से कहोगी तो नहीं?"

"मैं किससे कहूँगी?"

"मैया से."

"नहीं. नहीं कहूँगी."

"मैं पूजा घर में गयी थी. मैंने भगवानजीकी मूर्तियों को भी छुआ था ।" उसने ज़रा देर रुक कर कहा.

"तो क्या हुआ?"

"मैया ने कहा है मैं पूजा घर में गयी तो अनर्थ हो जायेगा. मैं रसोई में भी नहीं जा सकती."

"क्यों?"

"क्योंकि जब तक ख़ून बहेगा, मैं रसोई या पूजा घर में नहीं जा सकती."

"मगर क्यों?" मुझे यह सब शर्मनाक लग रहा था. क्या सचमुच मेरे साथ भी ऐसा हो सकता है? उसे कोई बीमारी हो गयी होगी. मुझे नहीं हो सकती. मुन्नी मेरे सवाल का जवाब नहीं दे पा रही थी.

"मैं जा रही हूँ मैया से पूछने."

"नहीं, नहीं! तुमने वादा किया था. कभी मत कहना मैया से. मेरे पूजा घर में जाने वाली बात से उन्हें दुःख होगा. वह डैड से कह देंगी. डैड पता नहीं क्या करें." मुन्नी अपने पिता से डरती थी.

वह परेशान लगने लगी. वह सोच रही थी कि मैं मैया से कह दूँगी. मैंने मैया से नहीं कहा. मैया धर्म को लेकर कट्टर थीं. मिशनरी स्कूल के छोटे से गिरजाघर में हम विद्यार्थियों को कभी कभी ले जाया जाता था. वहाँ नीची सी बेंचों पर घुटने टेक कर हम क्लास में रटायी गयी प्रार्थना बुदबुदाते थे. उसके बाद उँगलियों से छूकर, माथे और सीने पर क्रॉस बनाते हुए 'आमीन' कहते थे. गिरजाघर के बाहर दीवार में बने पात्र से 'होली वाटर' माथे पर लगाते थे. यह सब का रोमाँच था. मैया को पता चला था तो उन्होंने इसको लेकर बहुत शोर मचाया. उन्हें लगा था उनकी बेटी इसाई हो जायेगी. उन्होंने पिता को स्कूल भेज दिया था. हम फिर भी गिरजाघर जाते रहे. गिरजा पत्थर का बना हुआ और पुराना था. अंदर ठंडक रहती थी. काँटों का मुकुट पहने ईसू मसीह की प्रतिमा ऊपर, दूर पर टँगी थी. गिरजे के अंदर जाना अच्छा लगता था.

जब हम दसवीं कक्षा में पहुँचे, तो मुन्नी और मैं अलग अलग क्लास में बैठने लगे. वह हाई स्कूल वाले भाग में चली गयी और मैं सीनियर केम्ब्रिज वाले में. पढ़ाई बढ़ जाने के कारण मेरा उसके घर जाना भी कम हो गया. सीनियर केम्ब्रिज कर लेने के बाद, आगे पढ़ने के लिये मैं दिल्ली चली गयी, वह इलाहाबाद में रह गयी. छुट्टियों में इलाहाबाद आती तो उसकी ख़बर मिलती थी, कि वह लोकल अख़बार में पत्रकार हो गयी है, कि वह उसी मिशनरी स्कूल में पढ़ाने लगी है, जिसमें हम पढ़ा करते थे, कि उसने अपना अख़बार चलाना शुरू कर दिया है. कितने साल यूँ ही निकल गये. फिर पता चला कि वह बीमार है, काम काज सब छूट गया है. तभी से शायद उसकी याददाश्त वाली बीमारी शुरू हुई होगी. मगर मैं उसके घर नहीं गयी. मेरा वहाँ जाना बरसों से बंद हो गया था. हमारे घरों के बीच करौंदे की काँटों वाली झाड़ी कट गयी थी. उसके और मेरे घर के बीच की सीमा-रेखा कहाँ

है, यह साफ़ नहीं था, इसलिये वहाँ दीवार नहीं बनी थी. उसकी जगह, जहाँ संभवतः सीमा-रेखा होगी, वहाँ मेंहदी के पेड़ों की क़तार लगा दी गयी थी. मेंहदी में काँटे नहीं होते. रेड़ का जंगल साफ़ कर दिया गया था, यहाँ से वहाँ तक सब खुला था और नुक्कड़ पर पुराने चिलबिल की छाया में खड़ी बिंदादीन की गुमटी दिखने लगी थी. मगर उसके घर जाने का रास्ता अब ज़्यादा कठिन लगता था. वहाँ जाने का ख़्याल भी नहीं आता. फिर पता चला कि उसकी शादी एकदम से हो गयी है. वह कहीं दूर चली गयी है. शायद करनाल. या फिर कर्नाटक. ऐसा ही कोई नाम, बड़की ने कहा, जो उनके यहाँ भी काम करती थी.

बरसों तक मैंने उसे नहीं देखा. मेरी दुनिया बदल गयी थी. उसकी भी. मेरी दुनिया के नक़्शे से उसका नाम हट गया था. इलाहाबाद से दिल्ली और दिल्ली से विदेशी शहरों की सैर करने में आधी से ज़्यादा ज़िन्दगी निकल गयी. मैं बूढ़ी हो चली थी. वह भी मेरी ही उम्र की थी. मैं उसके बारे में बिल्कुल नहीं सोचती थी. वह अभी जीवित थी, क्योंकि उसके मरने की ख़बर नहीं आयी थी. अभी मरने की उम्र न तो उसकी थी, न मेरी. अगर ऐसी ख़बर आयी होती तो मैं उसके बारे में ज़रूर सोचती. मगर जल्दी ही उससे मिलना हुआ. अशोक की मृत्यु के बारे में बड़की ने बताया. टाइगर को सीटी बजाकर बुलाता हुआ टियु मुझे याद आया. मगर टाइगर और लिली तो कब के मर चुके थे. उनकी जगह सड़क के कुत्तों की फ़ौज ने ले ली थी, जिनको टियु रोटी खिलाता था. उसे कुत्ते पसंद थे. उसके परचाये हुए कुत्ते हमारे घर भी आकर रात भर नोच खसोट करते, शोर मचाते. अग्रवाल परिवार ज़िन्दगी भर हमारे पड़ोस वाले घर में बना रहा. ख़ुशी या ग़मी के मौक़े छोड़, वहाँ से शायद ही कोई हमारे घर कभी आया. मेरे घर से भी कोई वहाँ नहीं जाता था.मगर ख़बर पूरी रहती थी. बड़की ने अशोक की मृत्यु के बारे में नहीं बताया होता तो भी मुझे पता चल जाता. कोई मर गया है, इसका अंदाज़ मुझे हुआ था. रात को ग्यारह बजे रोने की आवाज़ मुझे अपने कमरे में ज़रा देर को सुनायी दी थी. फिर सन्नाटा. हमारे घरों के बीच रेड़ का जंगल नहीं था, मगर सन्नाटे में मुझे लगा कि जंगल कराह रहा है. हवा चल रही थी.

तीसरे दिन होने वाले शान्ति पाठ के पहले ही मैं वहाँ चली गयी. पत्थर के शेरों की पहरेदारी वाले सामने के फाटक से एक दो बार ही मैं वहाँ गयी थी. फाटक पर मुन्नी के स्वर्गीय

पिता और दोनों भाईयों का नाम लिखा था. मुन्नी का नाम नहीं लिखा था. मुन्नी को मैंने पूछा तो पता चला कि वह है. बल्कि यह, कि वह रोज़ चौक से आ जाती है. चौक में उसके पति का घर है. तो वह शहर छोड़कर गयी ही नहीं?

"तुम्हें तो मैं जानती हूँ!" उसने आते ही कहा."मगर तुम रहती कहाँ हो?"

"वहीं हूँ जहाँ थी, तुम्हारे बग़ल में. मगर तुम कहाँ हो? मैंने तो सुना था तुम कहीं बाहर हो?"

"नहीं, मैं चौक में रहती हूँ. मेरे पति वहाँ हैं. मेरी शादी हो गयी है. इस इलाक़े में हम घर ढूँढ़ रहे हैं."

"मगर यह घर तो ख़ाली पड़ा है?" उसने मेरे प्रश्न का जवाब नहीं दिया.

"मेरे पति मेरी देखभाल करते हैं. मेरी शादी एकदम से हो गयी थी." उसने कहा.

"सुना तो था. मगर कब हुई?"

"मुझे कुछ याद नहीं. मैं अस्पताल में थी. फिर मेरी शादी हो गयी. मैं मना कर रही थी मगर वह मान नहीं रहे थे."

"कौन नहीं मान रहे थे?"

"अशोक भैया और मेरे पति." वह टियु को अशोक भैया कब से कहने लगी थी?

"तुम्हारी शादी अस्पताल में हो गयी?"

"मुझे कुछ याद नहीं. किसी ने साड़ी का घूँघट मेरे मुँह पर डाल दिया था. कुछ दिख नहीं रहा था. अंदर गर्मी थी तो मैंने सिर निकालकर ऊपर देखा. अशोक भैया हाथ में सबसे बड़ा वाला कैडबरी चॉकलेट लिये खड़े थे. उसने चॉकलेट मेरे हाथ में पकड़ा दिया. तब मैं हँसी. अशोक भैया ही तो थे जो सब को हँसाते थे."

"हाँ, हमें बहुत हँसी आती थी. शाम को तुम चौक चली जाओगी?"

"नहीं. शान्ति पाठ के बाद जाऊँगी. तुम शान्ति पाठ में आना."

"ज़रूर आऊँगी."

"चलो मैया से तुम्हें मिलाती हूँ. वह ख़ुश हो जायेंगी." मैया अभी थीं? वे बहुत बूढ़ी हो गयी होंगी. जब हम ही बूढ़े हो गये थे.

उसने फिर अपनी बाँह मेरी बाँह में फँसा ली थी. वह गोल कमरे के मुख्य दरवाज़े से मुझे अंदर ले गयी. वह बड़े बड़े सोफ़े अब भी मौजूद थे, मगर उनके ऊपर का कपड़ा बदलकर कत्थई धारियों वाला कपड़ा मढ़ दिया गया था. और वह कमरे के बीच में नहीं, एक तरफ़ रख दिये गये थे. कुछ परिवार के लोग वहाँ बैठे आपस में बात कर रहे थे. एक औरत, जो शायद मुन्नी की

भाभी थी, किसी दूसरी औरत से धीमी आवाज़ में बात कर रही थी. मुझे देखकर वह चुप हो गयी. सब खड़े हो गये. कमरे में अँधेरा अँधेरा था. टाइगर और लिली सोफ़े पर नहीं सो रहे थे.

मुन्नी कमरे की गोलाई पार करती हुई मुझे अंदर के एक और कमरे तक ले गयी. फिर, एकदम से उसने मेरा हाथ पकड़ के मुझे रोक दिया. मैंने उसकी तरफ़ देखा. अँधेरे में उसका चेहरा साफ़ नहीं दिख रहा था. उसने फुसफुसाकर कहा,

"मैया से मत कहना!"

उस दिन को पचास साल बीत चुके थे. पचास साल जैसे पल भर में निकल गये थे. मगर वह दिन नहीं बीता था. वह मौजूद था अभी, उसके और मेरे दरमियान - समूचा, अपनी एक एक तफ़सील लिये ठहरा हुआ, अध्वंस्य. पचास साल उसको नष्ट नहीं कर पाये थे. और वह, जिसको कुछ याद नहीं रहता था, उसे वह दिन याद था.

मैया ने मुझे नहीं पहचाना. उनकी आँखें धँस गयी थीं, गाल की हड्डियाँ उभर आयी थीं. मोटी रज़ाई के नीचे वह दुबकी पड़ी थीं. जाड़ा था.

"मैया, अनीता आयी है," उसने कहा. "ऐनी! बग़ल वाले घर से?"

उनकी आँखों के गढ़ों में एकदम से पानी भर आया. उनके होंठ काँपने लगे. अशोक उनका पहला बच्चा था. उसे देखकर उनके चेहरे पर मुस्कान आ जाती. उसके लिये वह रसोई में जाकर उसके पसन्द की चीज़ें बनाती थीं. पहली बार किसी बच्चे के शरीर की गर्मी उन्होंने अपने शरीर पर महसूस की होगी. उन्होंने रज़ाई से एक हाथ बाहर निकालकर मेरा हाथ पकड़ लिया. उनके हाथ का माँस लगभग ग़ायब हो चुका था. मुझे लगा मेरे हाथ में लम्बी कुंजियों का ठंडा गुच्छा आ गया है.

"वह हेलीकाप्टर नहीं था," थोड़ी देर ख़ामोश रहने के बाद उन्होंने एकाएक मेरी तरफ़ देखकर कहा.

"मुझे मालूम हैकि वह हेलीकाप्टर नहीं था," मैंने कहा.

"चलो अब बाहर चलते हैं. तुमने उन्हें देख लिया." मुन्नी मेरा हाथ घसीट रही थी. शायद उसका डर लौट आया था कि मैं मैया से बता दूँगी. कि उसने भगवान की मूर्तियाँ छुआ था. जब वह 'अपवित्र' थी. लगभग आधी सदी बीत गयी

थी मगर वह अभी तक 'अपवित्र' और 'पवित्र' के जंजाल में फँसी हुई थी. एक बार वह कीड़ा दिमाग़ में घुस जाये, तो क्या वह सदा वहाँ रेंगता रहता है?

बाहर धूप में निकलकर अच्छा लगा. फाटक के पास, घास की पट्टी के बग़ल की क्यारियों में रंगबिरंगे मौसमी फूल खिले हुए थे.

"अब तुम कहाँ रहती हो?" शायद वह समझी नहीं थी कि मैं अभी उसी घर में थी, उसके बग़ल में.

"हम फिर कैसे मिलेंगे? अपना मोबाइल नम्बर दे देना," उसने बिना मेरे जवाब का इंतज़ार किये हुए कहा.

"हाँ, दे दूँगी," मैंने कहा. "तुम्हें मैसेज कर दूँगी."

उसने नहीं पूछा कि मैं उसे किस नम्बर पर मैसेज करूंगी.

"अपना मोबाइल नम्बर दे देना," उसने दोबारा कहा.

"हाँ, मैं मैसेज कर दूँगी," मैंने फिर कहा. मैं शेर वाले फाटक से बाहर निकलकर घर वापिस आ गयी.

अशोक के शान्ति पाठ में मैं नहीं गयी.

सम्पर्क सूत्र :

प्रमुख कहानीकार,

ई-मेल : sararai11@gmail.com

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक: 8; जनवरी-जून, 2024

कविता दादी का जीवन

डॉ. संजीव मंडल

गर्मियों की छुट्टियाँ शुरू हो गई थी। कुछ दिनों से घूमने फिरने में ही समय बीत रहा था। गर्मियों की छुट्टियाँ खत्म होते ही कॉलेज विक शुरू हो जायेगा। घर में लिखी गई कहानी की प्रतियोगिता में मुझे हिस्सा लेना है। मगर कहानी लिखने के लिए कोई प्लॉट नहीं मिल रहा है। कहानी लिखने की कोशिश मैं कर रहा हूँ इनदिनों। कहानी शुरू करता हूँ तो कुछ पंक्तियों के आगे बढ़ नहीं पाता। कहानी लिखना कितना मुश्किल है मुझे अब पता चल रहा है। सोचने को तो कुछ भी सोचा जा सकता है। पर उसे कहानी का रूप देना मुझे मेरे बस का नहीं लग रहा। मैं एक बहुत बड़ा कहानीकार बनना चाहता हूँ। जब स्कूल में था जानवरों को लेकर हल्की-फुल्की कथाएँ लिखता था। पर जो कहानियाँ अब मुझे कोर्स में पढ़ने को मिल रही है मुझे वैसी कहानी लिखनी है। प्रतियोगिता में पुरस्कार मिल जाये तो बड़ा
अच्छा होगा। पुरस्कृत कहानियों को कॉलेज मैगजीन में छापा जायेगा। खुद जब कुछ लिखते हैं, उसे छपा हुआ देखना कितना दिलचस्प होता है।

पिताजी ऑफिस से लौटे तो मैं उनके पास गया। वे नहा-धोकर चाय पी रहे थे। मैंने जब माँ से अपनी कहानी की बात की तो उन्होंने मुझे कहा कि पिताजी इस मामले में मेरी मदद कर सकते हैं। वे छात्र जीवन में कहानियाँ लिखते थे। पिताजी ने मुझे पास खड़े पाया तो मेरी तरफ देखने लगे मानो परख रहे हो कि मैं क्यों खड़ा हूँ वहाँ।

"क्या बात है भई। आजकल तो बहुत घूमना-फिरना हो रहा है। घर में दिखते नहीं। थोड़ा पढ़ाई-लिखाई भी करो। हम तो गर्मियों की छुट्टियों में भी पढ़ते थे। इससे हमारा सिलेबस जल्दी पूरा हो जाता था। बाकियों से हम चार कदम आगे रहते थे। परीक्षा के समय
रात-रात भर उल्लू की तरह जागकर नहीं पढ़ना पड़ता था।" पिताजी मुझे सलाह दे रहे थे।
मैंने पिताजी से कहा –

"पिताजी मुझे आप से एक जरूरी बात करनी है।"

"हाँ बोलो क्या बात है?"

"दरअसल मुझे आपसे थोड़ी मदद चाहिए।"

"जो बात है सीधे-सीधे कहो। मैं कोई बाघ हूँ क्या जो तुम्हें खा जाऊँगा।"

मैंने पिताजी को कहानी प्रतियोगिता की बात कही।

मेरी बात सुनकर पिताजी उत्साहित हो गए और एक पल के लिए तो मुझे लगा कहीं खो भी गए। उनकी आँखों में चमक थी।

"अरे बेटा यह बात है। मुझे पहले बोलते। अपने जमाने में मैंने भी बहुत सी कहानियाँ लिखी थीं। एक कहानी के लिए तो मुझे पुरस्कार भी मिला था। वह कहानी कॉलेज मैगजीन में भी छपी थी। तुम मेरे बुकशेल्फ में खोजोगे तो तुम्हें वह कहानी मिल जाएगी।"

"पिताजी आपकी कहानी मैगजीन में छपी थी।" इस बार मेरे उत्साहित होने की बारी थी। मैं वह कहानी पढ़ लेने के लिए बेचैन हो गया था।

"तेरा बाप भी एक जमाने में कहानीकार था।" पिताजी का सीना मानो चौड़ा हो गया था।

"पिताजी आप बैठिए मैं वह मैगजीन ढूँढ़ता हूँ।"

पिताजी का बुकशेल्फ खोला तो उसमें बहुत सी किताबें थीं। कई मैगजीनें भी थीं। मुझे पढ़ाई में इतनी रुचि नहीं थी। यह बुकशेल्फ खोलने का कभी अवसर ही नहीं आया। किताबों पर धूल जम गई थी। कुछ कॉलेज मैगजीनें मिलीं। मैगजीनों के कवर पेज पर बड़े-बड़े अक्षरों में छपा था 'कॉटनियान'। ये कॉटन कॉलेज के मैगजीन थे। पिताजी ने कॉटन कॉलेज में पढ़ाई की थी। मैंने एक-एक कर मैगजीनों की विषयसूची देख ली। एक मैगजीन में मुझे हिंदी सेक्सन में मेरे पिता की कहानी मिली – "कविता दादी का जीवन।"

मैं उछल पड़ा। मैं कहानी पढ़ने लगा।

(1)

कविता के गाल पर झन्नाटेदार झापड़ पड़ा। वह कई कदम हिल गयी और गिरते-गिरते बची। उसका दोष यह था कि उसके कमर से मिट्टी का घड़ा जो वह पानी से भरकर ला रही थी – गिरकर चकनाचूर हो गया था। कविता ने

न रोने की लाख कोशिश की पर उसकी रुलाई फूट पड़ी।

"हरामी! तेरे बाप को आने दे। एक ही घड़ा था,वह भी फोड़ दिया। अपनी खोपड़ी में पानी भरकर लायेगी अब।"

कविता सिसकती रही। कविता की बूढ़ी दादी बाहर का हंगामा सुनकर झोपड़ी से बाहर दौड़ी आई। क्या हुआ यह जानने में दादी को कुछ ही पल लगे। गीली जमीन पर टूटे पड़े घड़े के टुकड़ों और सिसकती कविता के लाल गाल को देखकर दादी सब समझ गयी।

कविता फूल सी कोमल और कलियों के उम्र की थी। इस छोटी सी लड़की की ऐसी हालत उसके माँ के गुजरने के बाद भी नहीं हुई थी। पर जब बाप दूसरी शादी कर लाया तब उसकी किस्मत के सितारे बूझ गए। हर रोज खड़ी-खोटी सुनना, लात-झापड़ खाना उसकी किस्मत बन गई थी। दादी सोचती उसके रहते ही ऐसी हालत है तो उसके मरने पर न जाने बच्ची को यह डायन जिंदा भी छोड़े या नहीं।

घड़े में पानी का वजन और दिनों को तो कविता संभाल लेती थी। पर कल रात से ही कविता को बुखार था और कमजोरी महसूस हो रही थी। छलकते घड़े को वह किसी तरह संभाल-संभालकर ला तो रही थी पर आँगन में पहुँचकर घड़े को उतारते वक्त कविता घड़े का वजन संभाल नहीं पाई,घड़ा हाथ से छूट गया और यह सर्वानाश हो गया।

(2)

"अरे सुनती हो, रामेश्वर की लड़की आई है,जा दुकान खोलकर सामान दे दे।" महेश दादा ने अपनी बूढ़ी पत्नी से कहा।

कविता दादी मानो सपने से जागी। अपने बचपन का वह दिन कविता दादी कितनी ही बार याद करती है। हर हरकत उसके आँखों के आगे सपने की तरह आ जाती है – सपनों की विचित्रताओं से खाली बिल्कुल ज्यों की त्यों। बचपन में सौतेली माँ के आने के बाद न जाने कितने ही दिन उसे मार खानी पड़ी,भूखा रहना पड़ा। पर वह दिन उसके मस्तिष्क से मिटाए नहीं मिटता।

"अरे भानु तुझे क्या चाहिए इस बेला?" खाना खाने का समय हो गया था या यों कह सकते हैं कि बीतने को ही था। दोपहर के बाद इस समय महेश दादा अपनी किराने की दुकान बंद ही रखते थे। खाना-वाना खाकर महेश दादा थोड़ा आराम करते,गाँजा फूँकते फिर कहीं दुकान खोलते। पर लोगों को चीजों की जरूरत तो

वक्त-बेवक्त पड़ सकती थी,इसलिए कभी-कभी दुकान खोलकर सामान देना पड़ता था।

कविता दादी ने दुकान खोली,भानु को सामान दिया। पैसे लिए। दुकान बंद करके खाना खाने चली गई। महेश दादा के पास आय का सबसे मजबूत साधन यह किराने की दुकान ही था। घर में कोई था नहीं,महेश दादा बूढ़े हो चुके थे, खेती की कुछ जमीन थी जो अब बँटाई पर चढ़ाकर गुजारा कर रहे थे। कविता दादी को महेश दादा बहुत प्यार करते थे। बच्चे भले ही उन्हें न हुए हो, पर उन्होंने कभी कविता दादी को इसके लिए एक भी शब्द नहीं कहा था। कविता दादी को जीवन में बहुत से दु:ख झेलने पड़े थे, पर महेश दादा के साथ वे अपने आप को सुखी मानती थी, क्योंकि भले ही अभावों के बीच ही जीवन बीता, वे महारानी की तरह नहीं रह पाई पर महेश दादा के साथ उन्होंने खुशी-खुशी ही अपनी 40 साल की शादी-शुदा जिंदगी बीता दी है।

कविता दादी को सभी बच्चे दादी ही पुकारते थे। इससे कविता दादी को सुकून मिलता था और अपने बच्चे न होने की कमी थोड़ी कम खटकतीथी।

(3)

चौदह-पंद्रह साल की हुई थी जब पिता ने गुवाहाटी के पांडु में किसी अमीर के घर कविता को काम करने भेज दिया था। पिता ने कहा था-

"देख बेटी,मेरे पास इतने पैसे नहीं कि तेरी शादी का खर्च निकाल पाऊँ। तू इस घर में काम कर और जितने हो सके पैसे इकट्ठा कर। तेरा मालिक अच्छा आदमी है। खाने-पीने को भी देगा,कपड़े-लत्ते भी देगा। पैसा भी देगा।"

कविता ने सिर झुका लिया था। फिर कविता उसी घर में काम करने लगी। उसे लगा घर में वह सूरज उगने से पहले उठकर काम पर लग जाती थी,रात ढलने तक काम करती रहती थी – यहाँ उससे कम ही मेहनत करनी पड़ती है। अब में कम से कम अपनी कमाई खाऊँगी।

वह तीन-चार महीने ही काम कर पाई थी कि उसके लिए वहाँ काम करना बहुत मुश्किल हो गया था। मालिक-मालकिन अच्छे थे। उसके प्रति स्नेह भी दिखाते थे। पर मालिक का बूढ़ा बाप जिस गलीज निगाहों से कविता को घूरता था, कविता उसे सह नहीं पा रही थी। फिर कुछ दिनों से बीच-बीच में बूढ़ा चाय देते वक्त कविता के हाथ पकड़ लेता था। कविता सोच रही थी काम छोड़ देगी। पर मालिक-

मालकिन को इसकी वजह क्या बतायेगी । क्या वह कह पायेगी साहब आपके बाप हरामी है । एक नौकरानी की कोई भी बात आखिर क्यों कोई मानेगा?

एक दिन कविता बूढ़े का कमरा साफ करने घुसी । देखा बूढ़ा सो रहा था । वह कमरा झाड़ू लगाने लगी । बूढ़ा सोने का नाटक कर रहा था । कविता झुककर झाड़ू लगा रही थी । बूढ़ा कविता को पीछे से देख रहा था । कविता का यौवनपुष्ट शरीर वह लोलुपता से देखता रहा । कविता झाड़ू लगाते हुए कमरे के एक कोने की तरफ बढ़ी । बूढ़े ने पीछे से आकर कविता को जकड़ लिया । कविता चौंक गई, वह कुछ करती उससे पहले ही बूढ़े ने इस तरह कविता को जकड़ा कि वह छूटने की जी तोड़ कोशिश करते हुए भी छूट नहीं पा रही थी । उसे इस बात पर आश्चर्य हुआ कि ऐसे मरियल बूढ़े में इतनी ताकत । बूढ़ा कविता को चूम रहा था । कविता ने चीखते हुए बूढ़े को जोर का धक्कादिया । बूढ़ा लड़खड़ाता हुआ जमीन पर गिरगया । गिरते ही बूढ़ा कराह उठा । कविता रोते हुए भागी और भागती रही । पीछे से बूढ़े की आवाज सुनी-

"साली तेरा जीना मुहाल न कर दिया तो देखना ।"

मालिक-मालकिन बच्चों के साथ पड़ोस में पूजा में गए हुए थे । कविता भागती गई । उसे अपने गाँव का रास्ता थोड़ा-थोड़ा पता था । पांडु से मिर्जा तक की दूरी उसने पैदल तय की । सवारी के लिए न उसके पास पैसे थे,न साहस । सूरज ढलते वक्त वह घर पहुँची । उसके छोटे भाई-बहन अपनी दीदी को देखकर खुशी से चिल्लाने लगे ।

अगले दिन मालिक-मालकिन कविता के घर आए । पूछा भी क्या बात है? क्या हुआ?वह क्यों वहाँ से बिना बताए चली आई?न कविता ने कुछ बताया न वापस जाने को राजी हुई ।

(4)

"क्या तुम मुझसे डरती हो,मैं खौफनाक हूँ?"

कविता चुप रही । श्रीकांत उसे देखता रहा । फिर वह मुस्कराने लगा ।

"तुम इतना डरती हो मुझसे, मैं बाघ नहीं हूँ ।"

आज दो महीनें हो गए है कविता को गाँवबूढ़ा के घर काम करने आए । परसो ही श्रीकांत आया है गुवाहाटी से । छरहरा युवक,देखने में बहुत ही सुंदर । श्रीकांत गाँवबूढ़ा का छोटा बेटा है । घर के लोग उसे बाबा कहकर

पुकारते हैं। दोनों भाभियाँ अपने देवर पर जान छिड़कती हैं। वह शहर से बहुत से उपहार लेकर आया है। घर के काम करते हुए कविता ने आते-जाते श्रीकांत को देखा है। पर वह श्रीकांत के देखते ही सिर झुका लेती है। पर ऐसे सुदर्शन युवक को देखने का मोह वह छोड़ नहीं पाती। इसलिए बीच-बीच में सबकी नजर बचाकर उसे निहारती है।

"बाबा भात परोस दिया है। चले आओ।"

बड़ी भाभी श्रीकांत को पुकारती है। श्रीकांत कविता के पास से रसोई घर चला जाता है। कविता की जान में जान आती है। उसकी तो साँसे ही नहीं चल रही थीं। वह बर्तन धोने लग जाती है।

(5)

कविता चाँदनी रात में श्रीकांत की बाहों में पड़ी हुई है। श्रीकांत उसे देख रहा है, उसकी पलकों को होठों से छू रहा है।

"तू मुझसे शादी करेगी?"

"आप मुझसे शादी करेंगे?"

"सवाल का जबाव सवाल नहीं होता।"

"मैं तो बहुत किस्मत वाली हूँगी।"

"तो मैं साल भर बाद पढ़ाई पूरी करके वापस आ जाऊँ,फिर मैं पिताजी से हमारी शादी की बात करूँगा।"

"वे मानेंगे?"

"तुझे कोई शक है?"

"मैं आपलोगों के घर काम करने वाली नौकारनी हूँ।"

"फिर ऐसा मत कहना।"

"पर..."

"कहा न।" श्रीकांत ने कविता के होठों पर होठ रखकर चुप करा दिया।

"ठीक है।"

श्रीकांत और कविता पूनम के चाँद तले भविष्य की योजनाएँ बनाते हुए पहली बार एक दूसरे के हो गए। कविता ने अपने जीवन के प्रथम पुरुष को अपना तन सौंप दिया।

दो दिन बाद श्रीकांत गर्मियों की छुट्टियाँ बिताकर गुवाहाटी चला गया।

दिन बीतने लगे। श्रीकांत के लौटने की बात होने लगी। कविता खुश होने लगी। श्रीकांत की शादी की बात होने लगी। कविता का जी घबराने लगा। आखिर वह दिन भी आया जब श्रीकांत वापस आया। श्रीकांत जब आया तब

कविता उसके कमरे के दरवाजे के पास ही खड़ी थी। पर श्रीकांत ने उसकी तरफ देखा तक नहीं। कविता का दिल टूट गया।

फिर वह दिन भी आया जब श्रीकांत की शादी हो गई।

कविता ठगी-ठगी सी रह गई। पर वह किस बूते श्रीकांत से कुछ कहती या उसके परिवार वालों से कुछ कहती। उसने तो चाँद को छूने की नहीं पाने की कामना की थी। पर क्या चाँद ने उसे अपने आप को सौंपने का वादा नहीं किया था। कविता कुछ नहीं बोली। अकेले में रोयी और खूब रोयी। पर धोखे का बदला वह क्या लेती। गाँवबूढ़ा के घर से काम छोड़ कर आ गई।

सौतेली माँ ने कुहराम मचाया कि काम छोड़-छोड़ कर आ जाती है, हम अनाज इकट्ठा करे और इस चूहे के बिल में झोंक दे जैसे हमें और कोई काम नहीं,हमें महामूरख समझ रखा है। आज कविता कितनी अकेली है। दादी भी साथ छोड़ कर उस लोक में जा चुकी है।

(6)

पहाड़ी ज्यादा ऊँची नहीं थी। नीचे एक झरना था। झरने के नीचे गड्ढा सा बना था। गाँव की औरतें-लड़कियाँ यही से पानी भरती थीं। नदी दूर थी। यहीं आसान था आना। यहाँ पानी भी बहुत साफ और मीठा था। कविता दो घड़े ले आई थी। पानी ठण्डा था। वसुधा पानी भर रही थी। उसके साथ एक युवक था जो सूखी लकड़ियों की एक भारी गठरी के पास खड़ा था। वसुधा ने बात आरम्भ की।

"तूने गाँवबूढ़ा के घर का काम छोड़ दिया।"

"हाँ।" कविता की आँखों में वेदना उमड़ आई थी।

फिर इधर उधर की कुछ बातें करने के बाद बोली- "वे मेरे भैया हैं। तेरे को पसंद करते हैं।"

कविता फटी-फटी आँखों से वसुधा को देखने लगी। वह युवक उसकी तरफ देखे जा रहा था। वसुधा अपनी रो में बोलती गई कि बहुत दिनों से उसके भैया कविता को पसंद करते हैं। फिर आखिर में उसने पूछा-

"मेरी भाभी बनेगी?"

कविता ने अपने सहेलियों को इस प्रस्ताव के बारे में बताया तो सभी ने यही कहा–

"महेश अच्छा लड़का है,तेरे श्रीकांत की तरह दिखने में सुंदर और पढ़ा-लिखा न हो पर तेरे को सुखी रखेगा।"

बिल्ली ने उनकी थाली में पड़ी मछली पर झपट्टा मारा तो कविता दादी चौंककर वर्तमान

में आ गई । जूठे बर्तन लेकर माँजने के लिए हैंड पंप के किनारे चली गई ।

•

कैसे लिखी होगी पिताजी ने यह कहानी? यह कविता दादी कौन थीं? क्या पिताजीउन्हें जानते थे? उनके जीवन के बारे में कैसे पता चला पिताजी को ये सारी बातें? क्या कविता दादी का नाम सच में कविता ही था? मैं पिताजी के पास चला गया । वे टी.वी. पर समाचार देख रहे थे । मुझे देखते ही उन्होंने पूछा – "मैगजीन मिल गई तुम्हें?"

"हाँ,मिल गई और मैंने कहानी पढ़ भी ली । बहुत सुंदर कहानी है । आप ने कैसे लिखी यह कहानी?"

"यह कहानी लिखने के लिए मुझे बड़ा संघर्ष करना पड़ा था । पर किसी तरह यह कहानी मैंने लिख ली ।"

"पिताजी क्या कविता दादी सच में थीं?"

"हाँ,कविता दादी सच में ही थीं ।"

"क्या आपने हूबहू उनके जीवन को पन्नों पर उतार दिया?"

"कहानी भी कभी हूबहू उतारी जातीहै । कहानी हमारी सृष्टि होती है । जीवन तो ईश्वर की सृष्टि है। जीवन का सृजन करके ईश्वर स्रष्टा बनने का सुख प्राप्त करता है । कहानी का सृजन कर हम लेखक स्रष्टा बनते हैं । कहानी जब हम लिखते हैं, तब यहाँ वहाँ से बहुत कुछ जोड़ने पड़ते हैं और यह सावधानी भी बरतनी पड़ती है कि वे जोड़ दिखाई न पड़े । कल्पना का भी सहारा लेना पड़ता है ।"

"पिताजी क्या मैं भी लिख पाऊँगा कोई अच्छी कहानी?"

"जरूर लिख पाओगे – इसमें कोई शक नहीं है । तुम्हारी रगों में एक लेखक का खून दौड़ रहा है । सिर्फ थोड़ी साधना करने की जरूरत है ।"

पिताजी ने मुझे उत्साहित कर दिया था और खुद के सामर्थ्य के प्रति आश्वस्त भी । मैं पन्ने लेकर कहानी लिखने बैठ गया ।

संपर्क सूत्र

सहायक प्राध्यापक

हिंदी विभाग

नगाँव महाविद्यालय (ऑटोनोमस)

चलभाष : 8135054304

ई-मेल:666mandal@gmail.com

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোং দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জুন, 2024

নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকত সমাজ চেতনা :

(বিষ্ণু , বেলিয়ে কোৱা সাধু আৰু বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাট নাটকৰ বিশেষ উল্লেখনেৰে)

পিকুমণি বৰা

ড° বিপুল মালাকাৰ

সংক্ষিপ্তসাৰ :

নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ প্ৰায়সংখ্যক নাটকৰে কাহিনী বা বিষয়বস্তুৰ আধাৰ সমাজ জীৱন। সমাজৰ বাস্তৱৰূপৰ নান্দনিক উপস্থাপন, সমসাময়িক সমাজত ঘটি থকা ঘটনাসমূহৰ ভাল অথবা বেয়া দিশৰ সুক্ষ্ম বিশ্লেষণ, ৰাজনৈতিক শ্লেষৰ কলাসন্মত প্ৰয়োগেৰে এক সুকীয়া নাট্যশৈলীৰ সূচনা কৰিছে। তেওঁৰ নাটকসমূহত

নাট্যকাৰৰ সুক্ষ্ম সমাজচেতনা, জীৱনবোধৰ প্ৰকাশ দেখা যায়। নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ বহুকেইখন পূৰ্ণাংগ নাটক, একাংকিকা নাটক তথা ৰেডিঅ' নাটকৰ ভিতৰত বিষ্ণু, বেলিয়ে কোৱা সাধু আৰু বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাট বিশেষভাৱে উল্লেখযোগ্য। প্ৰস্তাৱিত গৱেষণা পত্ৰত উক্ত নাটককেইখনৰ বিশেষ উল্লেখনেৰে নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকত সমাজ চেতনা কিদৰে প্ৰকাশিত হৈছে সেই বিষয়ে আলোচনা কৰা হ'ব।

সূচক শব্দ : সমাজচেতনা, একবিংশ শতিকা, নাটক, নাট্যকাৰ।

অধ্যয়নৰ পদ্ধতি :

নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকত সমাজচেতনা (বিষ্ণু, বেলিয়ে কোৱা সাধু আৰু বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাটৰ বিশেষ উল্লেখনৰে) শীৰ্ষক বিষয়টোৰ অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত বিশ্লেষণাত্মক,

বর্ণনামূলক, সাক্ষাৎকাৰ আৰু পৰিচয়মূলক পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে।

অধ্যয়নৰ পৰিসৰ :

গৱেষণা পত্রখনত নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ তিনিখন নাটক বিষ্ণু, বেলিয়ে কোৱা সাধু আৰু বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাট নাটকৰ জৰিয়তে তেওঁৰ নাটকত সমাজ চেতনাৰ প্রকাশৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হৈছে।

অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য :

ক) মহিলা নাট্যকাৰ হিচাপে নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ ব্যতিক্রমী নাট্যশৈলীৰ মূল্যায়ন আৰু নাট্যকাৰৰ
নাট্যকর্মৰ উল্লেখন।

খ) নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকত সমাজচেতনাৰ বিষয়ে অধ্যয়ন কৰা।

তথ্য আহৰণৰ উৎস :

তথ্য আহৰণৰ ক্ষেত্রত মুখ্য তথ্য হিচাপে নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ সাক্ষাৎকাৰ লোৱা হৈছে । তেওঁৰ ৰচিত নাটকসমূহৰ পাণ্ডুলিপি সংগ্রহ কৰি অধ্যয়ন কৰা হৈছে । তদুপৰি আলোচনী, বাতৰিকাকত আদিত তেওঁৰ নাটকৰ বিষয়ে প্রকাশিত আলোচনীসমূহ, তেওঁৰ ইতিপূর্বে বিভিন্ন মঞ্চত প্রদর্শিত নাটকৰ মঞ্চৰূপ পর্যবেক্ষণ কৰা হৈছে।

নাট্যকাৰৰ পৰিচয় :

অসমৰ কম সংখ্যক মহিলা প্রতিভাশালী নাট্যকাৰৰ ভিতৰত নিজৰা ৰাজকুমাৰীয়ে নাট্যকাৰ হিচাপে নিজৰ এক সুকীয়া শৈলী গঢ়ি তুলিছে । আমাৰ অসম কাকতৰ প্রাক্তন সাংবাদিক, বর্তমানৰ মুক্ত সাংবাদিক নিজৰা ৰাজকুমাৰী এগৰাকী গল্পকাৰ, চিনেমা সমালোচক, নাট সমালোচক, কবি আৰু প্রৱন্ধকাৰ । তেওঁৰ গল্পসমূহ প্রকাশ, গৰিয়সী, সাতসৰী, দৈনিক অসম আদিত প্রকাশ হোৱাৰ উপৰি অসমৰ বিভিন্ন গল্প প্রতিযোগিতাসমূহত পুৰস্কাৰ লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে । ৰসায়ন নাটকৰে নাট্যকাৰ হিচাপে আত্মপ্রকাশ কৰা নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকসমূহ হ'ল - বেলিয়ে কোৱা সাধু, ধোৱাময় পখিলাময়, জুইফুল সংগীত, কমলা নাটৰ ভেলভেট পৰুৱা, বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাট, বিষ্ণু, অশুভ অর্যমা (গল্প নাট), মায়া মৌপিয়া, গিৰিকূটৰ হীৰা ফুল আদি অন্যতম । একবিংশ শতিকাৰ নাটকে যি নতুনত্বৰ বাট বুলিছে সেই বাটেৰে এগৰাকী সমৃদ্ধিশালী নাট্যকাৰ হ'ল নিজৰা ৰাজকুমাৰী। মহিলা নাট্যকাৰ হ'লেও তেওঁৰ নাটকসমূহ নাৰীবাদী চিন্তাচেতনাৰে ভাড়াক্রান্ত হোৱাৰ বিপৰীতে প্রবলভাৱে জনমুখী। মহিলাসকলৰ সংগ্রাম, শোষণ বা অধিকাৰ সাব্যস্ত কৰা বিষয়বস্তুৰ বিপৰীতে তেওঁৰ নাটকে সমাজ, ৰাজনীতি, আর্থসামাজিক সচেতনাতা আদিক সামৰি লৈছে। ৰাজকুমাৰীৰ ব্যতিক্রমী কাহিনী কথন, সমাজৰ আর্থ সামাজিক ৰাজনৈতিক দিশৰ সুক্ষ্ম পর্যবেক্ষণ, সাম্প্রতিক ঘটনাপ্রৱাহকে বিষয় হিচাপে লৈ বহুকেইখন নাটক সৃষ্টি কৰাটো নিশ্চয় লক্ষণীয়।

নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকত সমাজচেতনা :

অসম এখন জনজাতিপ্রধান ৰাজ্য । ইয়াৰ ভৌগোলিক অৱস্থিতি আৰু বৈচিত্র্যপূর্ণ জনগাঁথনিয়ে যুগে যুগে ঐতিহ্য বহন কৰি আহিছে। অসমত বাস কৰা প্রতিটো জাতি জনগোষ্ঠীৰে সুকীয়া খাদ্যভাস, বস্ত্রশিল্প, লোকাচাৰ, লোকসাহিত্য, সংস্কৃতি যথেষ্ট সমৃদ্ধিশালী। এই সমৃদ্ধিশালী সংস্কৃতিয়ে অনেক সৃষ্টিৰ

সমল বহন কৰে। অসমৰ প্ৰায়বোৰ নাট্যকাৰৰ নাটকত থলুৱা ৰূপ-ৰস-গন্ধৰ এক সমন্বিত সোৱাদ থাকে । ৰাজকুমাৰীৰ নাটকৰ কাহিনী আৰু চৰিত্ৰসমূহে সমাজৰ সকলো শ্ৰেণীৰ লোককে প্ৰতিনিধিত্ব কৰে। সমাজৰ বাস্তৱ ৰূপটোক তেওঁ যেনেদৰে পৰ্যবেক্ষণ কৰিছে তাকেই অনন্য শৈলীৰে নাটকত উপস্থাপন কৰিছে । সমাজৰ আৰ্থ সামাজিক, ৰাজনৈতিক পৰিৱেশক বাস্তৱত ঘটি থকা ঘটনাৰ আলমত কলাগত দক্ষতাৰে নাটকত উপস্থাপন কৰাত নাট্যকাৰ সফল হৈছে।

নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ এখন সামাজিক নাটক "বিষ্ণু"। "বিষ্ণু" নাটকত প্ৰতিফলিত হোৱা জনগোষ্ঠীয় সমাজখনে সাম্প্ৰতিক সময়ৰ অসমৰ পৰিস্থিতি জীৱন্ত কৰি তুলিছে । অতীজৰে পৰা অসমৰ ভূমিপুত্ৰসকলে সমিলমিলেৰে বসতি কৰি আহিছে। পৰিৱৰ্তিত সময়ত নিজ অধিকাৰ, সম্পদ আৰু জাতীয় আৱেগক কেন্দ্ৰ কৰি বিভিন্ন জনজাতিৰ মাজত হোৱা ভাতৃঘাতী সংঘাত, পৰস্পৰবিৰোধী চিন্তাচেতনাসমূহে সাতামপুৰুষীয়া ঐক্য সম্প্ৰীতিত আঘাত সানি কিদৰে এক অশান্তিকৰ বাতাবৰণ সৃষ্টি কৰিছে সেই সকলো দিশ নাটকখনৰ কাহিনীয়ে সামৰি লৈছে । এই কাহিনী কাল্পনিক হ'লেও অসমৰ সমাজ জীৱনৰ তেনেই চিনাকি ছবি। উখোল আৰু মিচি দুটা কাল্পনিক জনজাতিক প্ৰতীক হিচাপে লৈ এনে কিছু সামাজিক সমস্যাৰ উত্থাপন কৰিছে।

> বিষ্ণুৰ মাক : পৰিস্থিতি বৰ ভাল নহয় অ' বোপাই । উখুলসকলে এইবাৰ সুকীয়া ৰাজ্য লৈহে এৰিব যেন পাইছো । যুগ যুগ ধৰি আমি মিচি গাওঁকেইখনে ইহঁতৰ লগতে বাই ভনীৰ দৰে থাকিলো । আন্দোলনৰ নামত পিতাৰৰ প্ৰাণটোৱেই গ'ল। এতিয়া মদন আৰু বিশ্বনাথে বোলে হুংকাৰ দিছে - আমাৰ মিচি মানুহক কাটি মাৰি দেওশিলাৰ বাহিৰ কৰি দিব লাগে । বৃহত্তৰ উখুলালগুত মিচি মানুহৰ সঁচ থাকিব নোৱাৰিব।

বিষ্ণুৰ মাকৰ সংলাপত জনজাতীয় সমাজৰ গোষ্ঠী সংঘৰ্ষৰ ভয়াবহতা প্ৰকাশ পাইছে। প্ৰত্যেকেই স্বায়ত্বশাসিত ৰাজ্যৰ বাবে দাবী তুলি সমাজ জীৱন অস্থিৰ কৰি তুলিছে। সবল সাংগঠনিক নেতৃত্ব আৰু পৰিকল্পিত আঁচনি অবিহনে কৰা দলীয় কামকাজে সাধাৰণ মানুহৰ শান্তি বিঘ্নিত কৰে । এজন উচ্চ শিক্ষিত প্ৰগতিশীল যুৱক, প্ৰতিভাৱান খেলুৰে বিষ্ণুয়ে সপোন দেখে এখন উন্নয়নমুখী ৰাজ্যৰ । য'ত সকলোৱে একেলগে শিক্ষা, খেলাধূলা, সংস্কৃতিৰ উত্তৰণত আগভাগ ল'ব । বিষ্ণুৰ সপোনৰ ৰাজ্যখন, সপোনৰ ফুটবল টীমটো য'ত গাৱঁৰ ল'ৰাছোৱালীবোৰক প্ৰশিক্ষণ দি সুদক্ষ খেলুৰে হিচাপে গঢ়ি তুলিব, এইসকলোবোৰ নিজৰ মাজতে হোৱা সংঘাতৰ ফলত নিঃশেষ হৈ যায় । নিজৰ মাজতে সম্পদ, অধিকাৰৰ বাবে হোৱা খোৱাকামোৰাত তৃতীয় পক্ষই সুবিধাবাদীৰ ভূমিকা লোৱাত বিষ্ণুৰ দৰে যুৱ প্ৰতিভা সমাজৰ পৰা হেৰাই যায়।

> বিষ্ণু : "চাই থাক, মদন বিশ্বনাথে যিটো ধ্বংসকাৰী আঁচনিত হাত দিছে তাৰ আৰম্ভণিহে আছে, শেষ নাই । শেষ যদি কিহবাৰ হ'বলগীয়া আছে, তেন্তে এই ধুনীয়া ঠাইখনৰ শান্তি । যিখিনি শক্তি, ধনজনৰ ক্ষতি হ'ব সেইখিনিৰে এটা ভাল ফুটবল টীম, কেইটামান ভাল খেতি কৰিব পৰা গ'লহেঁতেন। চাবি, এই হুলস্থূলৰ পাছত শান্তি আলোচনাৰ নামত কিমানটা যুগ পাৰ হৈ যাব।"

বিষ্ণুৰ এই সংলাপটোৱে বৰ্তমান সমাজৰ ৰাজনৈতিক ছবি এখন দেখুৱাইছে ।সমাজমুখী ৰূপান্তৰকামী চিন্তাৰ প্ৰতীক

বিষ্ণুৰ দৰে চৰিত্ৰ যেনেকৈ আমাৰ পৰিচিত ঠিক তেনেদৰে বিশ্বনাথ, মদনহঁতৰ দৰে ক্ষমতালোভী, অদূৰদৰ্শী, স্বাৰ্থপৰ চৰিত্ৰসমূহো আমাৰ সমাজত আছে। নাট্যকাৰে বিষ্ণু নাটকত ৰূপান্তৰকামী সমাজ চেতনাৰ কলাসন্মত উপস্থাপন কৰিছে।

নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ আন এখন সামাজিক নাটক হ'ল "বেলিয়ে কোৱা সাধু"। কাৰ্বি পাহাৰত হোৱা গুৱাহাটীৰ দুই যুৱক নিলোৎপল আৰু অভিজিত হত্যাকাণ্ডৰ সত্য ঘটনাৰ আলমত বেলিয়ে কোৱা সাধু নাটকখন ৰচনা কৰা হৈছে। সম্প্ৰতি মানুহৰ মাজত দেখা দিয়া বিশ্বাসহীনতা , অচিনাকি মানুহ এজনৰ বাবে মনত সৃষ্টি হোৱা সন্দেহপ্ৰৱণতা, প্ৰৰোচিত হৈ নৃশংসভাৱে হত্যাকাণ্ড সংঘতিত কৰিব পৰা মানসিকতা আদি সমাজৰ বাবে যথেষ্ট ক্ষতিকাৰক। এইসমূহৰ পৰিণতিত ভয়ংকৰ ঘটনা সংঘতিত হয়। দেশ

জোকাৰি যোৱা এই হত্যাকাণ্ডই এফালে যেনেকৈ এচাম মানুহৰ বিবেকহীন চেতনা উদঙাইছে আনহাতে মানৱীয় প্ৰমূল্যবোধতো আঘাত হানিছে। সঁচা, মিছা, দোষী, নিৰ্দোষী বিচাৰ কৰিব নোৱাৰা তেনে ঘটনাৰে সমাজ জীৱন কলুষিত হৈছে । কিছু তেনে ঘটনা পোহৰলৈ আহে, কিছু ঘটনা ৰাজনৈতিক হেঁচা বা আন কিছু কাৰণত সময়ৰ বুকুত হেৰাই যায় । কিন্তু এনে ঘটনাসমূহ য'ত বিভিন্ন ৰাজনৈতিক চক্ৰ জড়িত থকাৰ অৱকাশ থাকে সেইসমূহ নাটকত উপস্থাপন কৰাটো এক সাহসী পদক্ষেপ। ৰাজকুমাৰীৰ "বেলিয়ে কোৱা সাধুৰ" অমৰ আৰু ঋতুৰাগ দুটা সম্ভাৱনাময় চৰিত্ৰ। চিনেমা ভালপোৱা অমৰ আৰু গান ভালপোৱা ঋতুৰাগে চহৰৰ কোলাহলৰ পৰা আঁতৰি চিত্ৰকূটত সৃষ্টিৰ সমল বিচাৰি যায়। সপোন কঢ়িয়াই ফুৰা চৰিত্ৰ দুটাৰ সংলাপে প্ৰচলিত সমাজৰ বহু দিশত পোহৰ পেলাইছে।

অমৰ : "কি যে কৱ। অসমৰ মানুহে অসমতে ভয় কৰিলে কেনেকৈ হ'ব ? এইবোৰ আমাৰ ঠাই , আমাৰ মানুহ। নিজৰ ষ্টেটখনকে আমি ভালকৈ চিনি নাপাওঁ । সেই কাৰণেইটো নগৰ -গাঁও, পাহাৰ-ভৈয়াম বুলি ইমান অশান্তি, অবিশ্বাস। কোনেও কাকো নুবুজে। মিলামিছা কৰিলেহে বুজা যায়।"

অমৰৰ সংলাপত বৰ্তমান মানুহৰ মাজত থকা অসহনশীলতা, বিশ্বাসহীনতাৰ স্বাভাৱিক প্ৰকাশ ঘটিছে । অসমৰ আৰ্থসামাজিক ছবি এখন অমৰৰ আন এটা সংলাপে তুলি ধৰিছে।

অমৰ : অহ হয়তো। এইটোও কিবা আচৰিত কথা ন, ইমান ডাঙৰ এখন হাবি পাৰ হৈ এই মানুহবোৰে ক'ত যে গাঁওখন পাতিছেহি । সৌ নামঘৰতো আৰু এল.পি স্কুলখন বাৰু দেখিলো। কিন্তু হস্পিতাল ? বেমাৰ আজাৰ হ'লে বাৰু কি কৰে ?"

স্বাধীনতা লাভ কৰাৰ বহু বছৰ পাৰ হোৱাৰ পিছত বহুকেইটা ৰাজনৈতিক দলে শাসন কৰা ৰাজ্যখনৰ উন্নয়নৰ পয়ালগা দিশ অমৰ আৰু ঋতুৰাগৰ সংলাপত স্পষ্ট হয় । শাসকগোষ্ঠীৰ অন্যায়-অবিচাৰ, সাধাৰণ মানুহক আভুৰাভৰা নীতিৰ উপস্থাপন দীপু চৰিত্ৰটোৰ সংলাপৰ জৰিয়তে কৰা হৈছে।

দীপু : "মই চব বুজিছো। গাঁৱৰ ৰাস্তা আৰু হস্পিতালৰ নামত হোৱা গাফলাটো পাহৰাবলৈ সিহঁতে অমৰদাহঁতক মাৰি পেলালে মা।"

এইদৰেই ৰাজনৈতিক পাকচক্রৰ বলি হোৱা এখিনি পিছপৰা মানুহৰ আৱেগ, শংকা, সন্দেহ আদি মানৱীয় অনুভূতিসমূহক বিপথে পৰিচালিত কৰি সংঘতিত হোৱা হত্যাকাণ্ডটোৰ আলমত ৰচনা কৰা নাটকখনত নাট্যকাৰৰ সচেতন সামাজিক চেতনা প্রতিফলিত হৈছে । নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ আন এখন নাটক বাখৰুৱা নৈ ৰ'দৰ ঘাট নিমাতীঘাটত হোৱা নাঁও দুর্ঘটনা এটাক কেন্দ্র কৰি লিখা হৈছে । মাছমৰীয়া ললিত নাটকখনৰ কেন্দ্রীয় চৰিত্র । সমাজৰ নিম্ন মধ্যবিত্ত শ্রেণীৰ প্রতীক ললিত চৰিত্রটোৰ মাজেদি নাট্যকাৰে নৈপৰীয়া সমাজ জীৱনৰ ছৱি তুলি ধৰিছে। মাছমৰা জালখনেই ললিতৰ জীৱিকাৰ সম্বল, ঘাটটো আৰু নদীখন জীৱিকাৰ উৎস ।

ললিত : "উহ। গোটেইখন শামুকৰ খোলা। আজিকালি নৈখনেও মোৰ লগত ৰাজনীতি কৰিবলৈ লৈছে। নিজে শাহটো খাই খোলাসোপা জালত তুলি দিয়ে।"

নৈখনৰ প্রতি অভিযোগ কৰি কোৱা সংলাপটোত বর্তমান সমাজৰ ভোগবাদী চৰিত্রৰ প্রকাশ হৈছে। নৈ দূর্ঘটনাত একমাত্র বায়েকৰ মৃত্যু হোৱাত অমৃতাই মানসিক সন্তোলন হেৰুৱায়। অমৃতাৰ গিৰিয়েক পুলক স্থানীয় বিধায়ক পদৰ প্রার্থী । পুলক চৰিত্রটোক তথাকথিত নেতাৰ চৰিত্রতকৈ প্রগতিশীল যুৱনেতাৰ প্রতিভূ হিচাপে নাট্যকাৰে অংকন কৰিছে। পুলকে এই নাঁও দুর্ঘটনাৰ ভয়াবহতা উপলব্ধি কৰি এখন দলং গঢ়াৰ প্রতিশ্রুতি অমৃতাক দিছে । এখন দলং নোহোৱা বাবে নদদ্বীপটোৰ বাসিন্দাসকলৰ দূর্গতি তন্ময় চৰিত্রৰ জৰিয়তে নাট্যকাৰে উপস্থাপন কৰিছে। ৰাতি মাকৰ অসুখৰ কথা শুনিও ঘাট পাৰ হ'ব নোৱাৰি তন্ময়ে কৈছে -

"ৰাতি বাঢ়িছে , মাৰ পেটৰ বিষটোও চাগে বাঢ়ি আহিছে। উফ্ দলং এখন থকা হ'লে - এতিয়াই মাক ....।"

ললিতৰ ঘৈণীয়েকৰ গর্ভৱতী অৱস্থাত মাকৰ ঘৰলৈ গৈ হঠাৎ ৰাতি গা বেয়া হৈ উন্নত চিকিৎসাৰ অভাৱত মৃত্যু হয়। বিজ্ঞানৰ এনে উন্নয়নৰ যুগত এখন দলঙৰ অভাৱত মানুহে জীৱন হেৰুৱাব লগাটো অত্যন্ত দূর্ভাগ্যজনক। সমাজ জীৱনৰ এনে দিশটোৰ নাট্যকাৰে যথেষ্ট সংবেদনশীলতাৰে নাটকখনত উপস্থাপন কৰিছে।

সামগ্রিক সিদ্ধান্ত :

সামগ্রিক আলোচনাৰ অন্তত আমি কেইটামান সিদ্ধান্তত উপনীত হৈছো।

১/ একবিংশ শতিকাৰ নাট্যচর্চা সমৃদ্ধ কৰা নাট্যকাৰসকলৰ ভিতৰত নিজৰা ৰাজকুমাৰীয়ে এক সুকীয়া শৈলী তৈয়াৰ কৰিছে।

২/ নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকে সমকালীন সমাজৰ বাস্তৱ ছবি বহন কৰিছে। ৩/ নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ প্রায়বোৰ নাটকেই সামাজিক পটভূমিত ৰচিত হোৱাৰ লগতে সমাজ চেতনাৰে সংপৃক্ত।

সামৰণি :

অসমৰ কমসংখ্যক মহিলা নাট্যকাৰৰ মাজত নিজৰা ৰাজকুমাৰীয়ে যথেষ্ট সম্ভাৱনা বহন কৰিছে। তেওঁৰ নাটকসমূহ অসমৰ সমাজ জীৱনৰ এক দস্তাৱেজ । চিনেমা সমালোচক ৰাজকুমাৰীৰ প্রায়বোৰ নাটকতে এক চিনেমেটিক ট্রিটমেন্ট দেখা যায় । যি তেওঁৰ নাটকসমূহত এক ইল্যুজন (Illusion) সৃষ্টি কৰাত সহায় কৰে । অতিনাটকীয়তা

পৰিহাৰ কৰি সৃষ্টি কৰা নাটকৰ চৰিত্রসমূহে পাঠক তথা দৰ্শকক নাটকৰ লগত একাত্ম হোৱাত সহায় কৰে। তেওঁৰ প্রতিখন নাটকে গভীৰ সামাজিক চেতনা আৰু সামাজিক দায়িত্ববোধ বহন কৰে। সেয়েহে তেওঁৰ নাটকৰ সবিস্তাৰ মূল্যায়নৰ প্রয়োজন আছে। গৱেষণা পত্রৰ পৰিধিৰ প্রতি লক্ষ্য ৰাখি তিনিখন নাটকহে আলোচনা কৰা হয়। তথাপি এই অধ্যয়নে নিজৰা ৰাজকুমাৰীৰ নাটকৰ ভৱিষ্যত অধ্যয়নৰ বাট মুকলি কৰিব বুলি আমি আশাবাদী।

গ্রন্থপঞ্জী :

কলিতা, ড° মণিৰাম : নাট্যলোচনা, অলিম্পিয়া প্রকাশন, গুৱাহাটী , ২০১৬।

বৰা, ধ্রুৱজ্যোতি : জোনাক, জোনাক সাংস্কৃতিক গোষ্ঠী, দেৰগাওঁ, ২০১৯ ।

সাক্ষাৎকাৰ :

১/ নিজৰা ৰাজকুমাৰী, বিশ্বনাথচাৰিআলি।

২/ জ্যোতিপ্রসাদ ভূঞা, নগাঁও (আলোচিত নাটককেইখনৰ পৰিচালক)।

যোগাযোগৰ ঠিকনা –

গৱেষক ছাত্রী, অসমীয়া বিভাগ,
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়,
pikuumoniborah77@gmail.com

সহযোগী অধ্যাপক , অসমীয়া বিভাগ ,
নগাঁও ছোৱালী মহাবিদ্যালয়

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোং দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জূন, 2024

‘ঘোষ্ট’ নাটকৰ অসমীয়া অনুবাদ ভূত : এক অধ্যয়ন

ভাস্বতী বৰুৱা

সংক্ষিপ্তসাৰ :

সাহিত্যৰ অন্য এক ৰূপ হৈছে অনুবাদ সাহিত্য। দৰাচলতে বহুভাষিক জগতখনত সকলোবোৰ ভাষা জনাতো সম্ভৱ নহয়। এনে পৰিস্থিতিত অনুবাদ কার্যই বিশেষভাৱে সহায় কৰি আহিছে। গল্প, কবিতা, প্রবন্ধ আদিৰ দৰে পশ্চিমীয়া বহুকেইখন নাটক অসমীয়া ভাষালৈ

অনুবাদ আৰু অভিযোজনা কৰা হৈছে। অসমীয়া ভাষাত শেচইক্সপীয়েৰ, ছফ’ক্লিছ, ইবচেন, চেমুৱেল বেকেট আদি প্রসিদ্ধ নাট্যকাৰৰ বহুকেইখন নাট অনুবাদ তথা অভিযোজনা ৰূপ পাইছে। ইউৰোপৰ এজন নাট্যকাৰ হৈছে হেনৰিক ইবচেন (Henrik Ibsen 1828-1906)। ইবচেনৰ নাটকৰ বিষয়বস্তু মূলত বাস্তৱ জীৱনৰ লগত জড়িত। সমাজৰ কিছুমান বাস্তৱ সত্য তেওঁ নাটকসমূহত প্রতিফলিত কৰিছে। তেওঁৰ এনে বিষয় পৰিস্ফূট হোৱা এখন নাটক হৈছে ‘ঘোষ্ট’। নাটকখনত সমাজত প্রচলিত আদর্শৰ বিৰুদ্ধে এক ধৰণৰ তীব্র প্রতিক্রিয়া প্রকাশ পাইছে। ঘোষ্ট নাটকখন মহেন্দ্র বৰাই ‘ভূত’ নামে ১৯৮১ চনত প্রকাশ কৰে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্রখনত ইংৰাজী নাটকখনৰ পৰা অনুবাদকে কেনে পদ্ধতিৰ সহায়ত অসমীয়া ৰূপত অনুবাদ কৰিছে এই সন্দর্ভে আলোচনা কৰিবলৈ প্রয়াস কৰা হৈছে।

বীজ শব্দ : অনুবাদ, অনুদিত ৰূপ, মূল নাট।

০.১ বিষয়ৰ পৰিচয়ঃ উনবিংশ শতিকাৰ শেষভাগৰ পৰা পাশ্চাত্য নাটকৰ বিষয়বস্তু আৰু কলা-কৌশলৰ দ্বাৰা অনুপ্রাণিত হৈ এচাম অসমীয়া যুৱকে আধুনিক অসমীয়া নাট ৰচনা কৰে। ধর্মীয় ৰীতি নীতিৰ পৰা ফালৰি কাটি আহি

তেওঁলোকে ইতিহাসৰ নানা চৰিত্ৰ আৰু সমাজৰ কিছুমান সমস্যাক নাটকৰ বিষয়বস্তু হিচাপে স্থান দিয়ে। যেনে গুণাভিৰাম বৰুৱাৰ ৰাম-নৱমী (১৮৫৭), হেমচন্দ্ৰ বৰুৱাৰ কানীয়াৰ কীৰ্ত্তন (১৮৬১), লক্ষ্মীনাথ বেজবৰুৱাৰ জয়মতী কুৱৰী (১৯১৫), বেলিমাৰ আৰু চক্ৰধ্বজ সিংহ(১৯১৫) ইত্যাদি। অসমীয়া ভাষালৈ অনুদিত প্ৰথমখন নাটক হৈছে 'ভ্ৰমৰংগ'। চাৰিজন অসমীয়া যুৱক ক্ৰমে- ৰমাকান্ত বৰকাকতি, ঘনশ্যাম বৰুৱা, গুঞ্জানন বৰুৱা আৰু ৰত্নধৰ বৰুৱাই নাটখন অভিযোজনা পদ্ধতিৰে অনুবাদ কৰে। নাটকখনৰ মূল হৈছে শেৱইক্সপীয়েৰৰ 'Comedy of Errors'। পৰৱৰ্তী সময়ত উইলিয়াম শেৱইক্সপীয়েৰকে ধৰি হেনৰিক ইবচেন, চেমুৱেল বেকেট, বাৰ্টোল্ট ব্ৰেখট, ইউজিন আয়'নেস্কো ইত্যাদি নাট্যকাৰৰ বহুকেইখন নাট অনুবাদ কৰা হয়। এনে অনুবাদে ভিন্ন দেশৰ ভিন্ন সাহিত্যৰ সোৱাদ দিয়ে। তদুপৰি পাশ্চাত্য নাট্য শৈলীৰ বিভিন্ন কলা কৌশল অসমীয়া নাট্য সাহিত্যৰ লগত সংযোজিত হয়।

ইবচেনৰ 'A doll's house' নাটকখন পদ্ম বৰকটকীয়ে পুতলা ঘৰ (১৯৫৯) নামে অনুবাদ কৰে। একেদৰে সত্যপ্ৰসাদ বৰুৱাই 'The Wild Duck' নাটকখন বনহংসী আৰু মহেন্দ্ৰ বৰাই 'Ghost' নাটকখন 'ভূত' (১৯৬৫) নামে অনুবাদ কৰে। বাস্তৱধৰ্মী নাট্যকাৰ হিচাপে পৰিচিত ইবচেনে ঘোষ্ট নাটকখনত সমাজত প্ৰচলিত আদৰ্শৰ বিৰুদ্ধে ব্যংগভাৱে যেন প্ৰতিবাদ কৰিছে। প্ৰচলিত আদৰ্শ আৰু নীতি নিয়মৰ মাজত চলিবলৈ গৈ বহুসময়ত ব্যক্তিয়ে মানসিক অশান্তি ভূগিব লগাত পৰে। দৰাচলতে সামাজিকভাৱে স্বীকৃত বিবাহ প্ৰথা, পিতৃপ্ৰধান পাৰিবাৰিক জীৱনক নাটকখনৰ জৰিয়তে আক্ৰমণ কৰা হৈছে। ঘোষ্ট শব্দটোৱেই একধৰণৰ প্ৰতীকি অৰ্থত ব্যৱহাৰ হৈছে। অৰ্থাৎ প্ৰচলিত ৰীতি নীতি, আভিজাত্যৰ ভেম, স্ত্ৰীসকলৰ গৃহস্থী ধৰ্ম, সম্ভ্ৰান্ততা ইত্যাদিয়েও বহুসময়ত মানুহৰ ওপৰত ভূতৰ দৰে ক্ৰীয়া কৰে।

সাহিত্যৰ বৈশিষ্ট্য অনুযায়ী অনুবাদ শৈলীৰ পাৰ্থক্য আছে। আমাৰ এই গৱেষণা পত্ৰত ইংৰাজী ঘোষ্ট নাটকখন আৰু ইয়াৰ অনুদিত ৰূপ 'ভূত'ৰ লগত এক তুলনামূলক পদ্ধতিৰে আলোচনা কৰিবলৈ প্ৰয়াস কৰা হ'ব।

০.২ অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব আৰু উদ্দেশ্যঃ

বহুকেইখন পাশ্চাত্য নাটক অসমীয়া ভাষালৈ অনুবাদ তথা অভিযোজনা হৈছে। ইবচেনৰ ঘোষ্ট নাটকখন মহেন্দ্ৰ বৰাই ভূত নামেৰে অনুবাদ কৰিছে। অনুবাদৰ বিভিন্ন ৰীতি-নীতি, কলা-কৌশল প্ৰয়োগেৰে নাটখন কেনেদৰে অনুবাদ কৰা হৈছে এই সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাৰ থল আছে। কিয়নো বহুসময়ত অনুবাদে মূল পাঠৰ ভাৱবহন কৰিবলৈ সক্ষম নহয়। তদুপৰি আক্ষৰিক অনুবাদেই যে ভাল অনুবাদ এনে নহয় কিয়নো লক্ষ্যপাঠৰ লগত সামঞ্জস্য ৰাখিবলৈ কেতিয়াবা ভাৱানুবাদৰো সহায় লবলগাত পৰে। সেয়ে আন আন অনুবাদৰ দৰে নাটকৰ অনুবাদ সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাৰ প্ৰয়োজনীয়তা আছে। মূল ইংৰাজী নাটকখনৰ ভাৱ আৰু কলা কৌশল কেনেদৰে ইয়াত প্ৰকাশ পাইছে এই সম্পৰ্কে অধ্যয়ন কৰাই গৱেষণা পত্ৰৰ মূল উদ্দেশ্য। বিষয়টো সন্দৰ্ভত থকা উদ্দেশ্যসমূহ হ'ল -

(ক) মূল নাটকৰ লগত অনুদিত ৰূপৰ কাহিনী বা বিষয়বস্তু একে আছে নে কিবা পৰিৱৰ্তন হৈছে এই সম্পৰ্কে জানিব পৰা যাব।

(খ) অনুবাদ কৰিবলৈ গৈ শব্দানুবাদ নে ভাৱানুবাদৰ সহায় লৈছে এই সম্পৰ্কে জানিব পৰা যাব।

(গ) মহেন্দ্ৰ বৰাই যি পদ্ধতিৰে অনুবাদ কৰিছে এনে অনুবাদে মূলৰ পৰা আতৰি আহিছে নেকি? বা মূল নাটকৰ সমপৰ্যায়ৰ হৈছে নে নাই এই সম্পৰ্কে জানিব পৰা যাব।

০.৩ অধ্যয়নৰ পৰিসৰঃ

ইবচেনৰ বহুকেইখন নাট অসমীয়ালৈ অনুবাদ হৈছে যদিও আমাৰ এই আলোচনাত তেওঁৰ ঘোষ্ট নাটকৰ অসমীয়া ৰূপ 'ভূত' নাটখনৰ বিষয়ে আলোচনা কৰা হ'ব। তদুপৰি ইয়াত কাহিনী বা চৰিত্ৰৰ বিশ্লেষণ নকৰি অনুবাদত কেনেধৰণে নাটকখনে মূলৰ কাষ চাপিছে এই সম্পৰ্কেহে ইয়াত বিশ্লেষন কৰা হ'ব।

০.৪ অধ্যয়নৰ পদ্ধতিঃ

অনুবাদৰ বিভিন্ন শৈলী বা পদ্ধতিৰে কেনেদৰে নাটকখন অসমীয়া ৰূপ দিয়া হৈছে ইয়াত বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰে আলোচনা কৰা হ'ব। তদুপৰি উৎস পাঠ আৰু লক্ষ্য পাঠৰ মাজত তুলনামূলকভাৱে বিষয়ৰ আলোচনা কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হ'ব। মূখ্য সমল হিচাপে ইংৰাজী আৰু অসমীয়া অনুবাদ নাটকখন লোৱা হৈছে আৰু গৌণ সমল হিচাপে অনুবাদ সম্পৰ্কীয় বিভিন্ন গ্ৰন্থ, আলোচনী আৰু ইন্টাৰ্নেটৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০ কাহিনীৰ চমু আভাসঃ

ঘোষ্ট নাটকখন ১৮৮১ চনত প্ৰকাশ পায় আৰু ১৮৮২ চনত চিকাগোত প্ৰথমবাৰৰ বাবে মঞ্চস্থ কৰে। (ভট্টাচার্য ১৫৯)। এই নাটকখন মহেন্দ্ৰ বৰাই ১৯৬৫ চনত ভূত নামেৰে অসমীয়া ভাষালৈ অনুবাদ কৰে। মূলত পাচঁটা চৰিত্ৰৰে এটা দিনৰ নাটকীয় বৰ্ণনাৰে নাটকখনক পূৰ্ণ ৰূপ দিছে। নাটকখনৰ জৰিয়তে এগৰাকী

নাৰীয়ে পত্নী হিচাপে গোটেই জীৱন কেনেদৰে মানসিক অশান্তিৰে কাল কটাইছে প্ৰকাশ পাইছে। ৰূপহী, গাঢ় চৰিত্ৰৰ গৰাকী হেলেনে মেণ্ডার্চ নামৰ পুৰোহিত এজনক মনে প্ৰাণে বিচাৰে যদিও ৰোজেনভেল্ড নামৰ উদ্যানৰ মালিকৰ সৈতে হেলেনক বিয়া পতাই দিয়ে। গিৰিয়েক আলভিঙৰ চৰিত্ৰ ভাল নাছিল। হেলেনে গিৰিয়েকৰ চৰিত্ৰৰ কথা জনাৰ পিছত পূৰ্বৰ প্ৰেমিক মেণ্ডার্চৰ কাষ চাপে। কিন্তু মেণ্ডার্চ আছিল সমাজৰ নীতি নিয়মৰ মাজেৰে চলা এজন ব্যক্তি। সেয়ে হেলেনক পুনৰ নিজৰ বৈবাহিক জীৱনলৈ ঘূৰাই পঠায়।

হেলেনে পাৰ্যমানে নিজৰ সংসাৰখন শৃংখলাবদ্ধভাৱে ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰিলে। সমাজৰ দৃষ্টিত যেন তেওঁ সফলো হৈছিল। হেলেন এজন ল'ৰাৰ মাতৃ হ'ল। কিন্তু গিৰিয়েকৰ চৰিত্ৰৰ কোনো পৰিৱৰ্তন নহ'ল। সেয়ে ক্ৰমে যুৱকত পৰিণত হোৱা ল'ৰা অছৱাল্ডক ঘৰৰ পৰা দূৰত ৰাখিবলৈ সিদ্ধান্ত ল'লে। ইতিমধ্যে স্বামী আলভিঙৰ মৃত্যু হয়। হেলেনে আলভিঙৰ স্মৃতিত

এখন অনাথ আশ্ৰম স্থাপন কৰে। আশ্ৰমখন মুকলি কৰিবলৈ পুৰোহিত মেণ্ডার্চক আমন্ত্ৰণ কৰে। নিৰ্দিষ্ট দিনত পুতেক

অছৱাল্ডো উপস্থিত থাকে। হেলেনৰ জীৱনৰ ঘটনাবোৰ এই দিনটোত কৌশলপূর্ণভাৱে দাঙি ধৰিছে।

একমাত্র পুত্রক কুচৰিত্রৰ পৰা আতৰত ৰখাৰ চেষ্টা যেন বিফল হ'ল। কিয়নো পূর্বপুৰুষৰ কর্মফল অছৱাল্ডে ভূগিব লগাত পৰে। ডেকা হৈ অহাৰ লগে লগে অছৱাল্ডো পিতৃৰ দৰে হ'বলৈ ধৰে। লাহে লাহে সি মফিয়া পাউডাৰ ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ লয়। অছৱাল্ডে ক্রমান্বয়ে মানসিক স্থিতি হেৰুৱাই পেলায়। পূর্বৰ কর্মবোৰেই যেন ভূতৰ ৰূপ লৈ বাৰে বাৰে তেওঁলোকৰ জীৱন ব্যতিব্যস্ত কৰিছে। শিসুৰ দৰে সি কাম কৰা ছোৱালী ৰেজিনাক আনি দিবলৈ মাকক খাটনি ধৰিছে। সি পুনৰ জীৱন বিচাৰে, পোহৰ বিচাৰে সেয়ে সূর্যটো আনিবলৈ বাৰে বাৰে এনেদৰে কৈছে-

OSVALD (Repeat in a dull monotone).

"The sun, The sun". (Nagpal ed. 77)

১.১ অনুবাদ নাটক হিচাপে ভূত

ভূত শীর্ষক নাটকখনৰ অনুবাদ সন্দর্ভত আৰম্ভণিতে এনেদৰে উল্লেখ কৰা হৈছে-

"Bhut. This translation in Assamese by Mahendra Bara of Ibsen's Ghost is published with the assistance of UNESCO as part of Unesco's major project for furthering mutual appreciation of Eastern and Western Cultural values" (বৰা ৪)

অর্থাৎ নাটকখনৰ অসমীয়া অনুবাদটো পূর্ব আৰু পশ্চিমীয়া সাংস্কৃতিক মূল্যবোধৰ পাৰস্পৰিক প্রশংসা বৃদ্ধিৰ বাবে ইউনেস্কোৰ প্রধান প্রকল্পৰ অংশ হিচাপে ইউনেস্কোৰ সহায়ত প্রকাশ কৰা হৈছে।

নাটখনৰ শিৰোনাম আক্ষৰিকভাৱে অনুবাদ কৰা হৈছে আনহাতে চৰিত্রৰ নামবোৰ একেধৰণে ৰখা হৈছে। মূল কাহিনী আৰু অন্তর্নিহিত বিষয়বস্তুৰ অনুবাদত কোনোধৰণৰ পৰিৱর্তন হোৱা নাই। মহেন্দ্র বৰাই অনুবাদৰ পদ্ধতি হিচাপে আক্ষৰিক দিশৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছে। অৱশ্যে কিছুমান সংলাপৰ ক্ষেত্রত কিছু পৰিমানে ভাৱানুবাদৰ সহায় লৈছে। বহুসময়ত বাক্যগাথনিৰ পৰিৱর্তনৰ বাবে চৰিত্রৰ মনৰ ভাৱৰ অনুবাদত যেন পৰিৱর্তন হৈছে। আৰম্ভণিতে ৰেজিনা আৰু বাপেক এংষ্ট্রানৰ মাজত হোৱা কথোপকথনৰ মাজেৰে এনে কিছুমান ভাৱৰ সাল-সলনি হোৱা দেখা গৈছে। যেনে-

"ENGSTRAND. What the devil is this? You trying to cross your own father, you slut?" (Nagpal 6)

ইয়াত দেউতাকে কঠিন সুৰত জীয়েকক এনেদৰে কোৱা যেন অনুমান হৈছে। আনহাতে অনুবাদকে এনেদৰে অনুবাদ কৰিছে –

"এংষ্ট্রাণ্ড। আইটি! তইনো বাৰু এইবোৰ কি বলকিছ? তইনো বাৰু তোৰ নিজৰ বাপেকৰ লগত কাজিয়া কৰ নে?" (বৰা ৫)

প্রথমৰে পৰা ইংৰাজী নাটখনত ৰেজিনাই বাপেকক তীক্ষ্ণ বাক্যৰে ওলাই যাব কোৱা যেন লাগে-

Regina- "All right now, get out of here.

I'm not going to stand around, having a rendezvous with you". (Nagpal 5)

আনহাতে অনুবাদত বাক্যটোত কিছু পৰিমানে যেন শালীনতা বজাই ৰখাৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছে। কিয়নো আমাৰ সমাজত পিতৃ-মাতৃৰ সৈতে সন্মান আৰু শ্ৰদ্ধাৰে কথা বতৰা পতা হয়। এনে নহয় যে পাশ্চাত্য সমাজত মাক দেউতাকক বেয়া ব্যৱহাৰ কৰে, কিন্তু ৰেজিনা আৰু বাপেকৰ সম্পৰ্কটোৱেই দৰাচলতে আউল লগা ধৰণৰ। সেয়ে ইয়াত কটু বাক্য ব্যৱহাৰ কৰাটো যেন স্বাভাৱিক। আনহাতে, অনুবাদকে সম্ভৱত দৰ্শকৰ মনত যাতে বেয়াকৈ প্ৰভাৱ নপৰে সেয়ে প্ৰথমে ৰেজিনা আৰু বাপেকৰ কথাত কোমলতাৰ ভাৱ প্ৰকাশ কৰিছে। উক্ত সংলাপটো ইয়াত এনেদৰে দিছে-

ৰেজিনা- "ওঁ বুজিছো বাৰু। পিচে কথাটো চুটি কৰাঁ। এনেকৈ থিয় হৈ থাকিব নোৱাৰোঁ নহয়, যেন আয়োজন কৰি লৈ তোমাৰ লগত কিবা আড্ডাহে দিছো"। (বৰা ৪)

ইয়াত বাহিৰ হোৱা বুলি কোৱাতকৈ কথাটো চুটি কৰা বুলিয়েই পৰোক্ষভাৱে যেন দেউতাককক ওলাই যাবলৈ ইংগিত দিছে। কিন্তু মূল নাটকৰ দৰে ইয়াত বিৰক্তিৰ ভাৱটো বেছিকৈ ফুটি উঠা নাই।

'Get out' শব্দটোৱে একেটা অর্থকে বুজাই যদিও ইয়াত পৰিৱেশ পৰিস্থিতি অনুসাৰে সংলাপবোৰত বেলেগ বেলেগ সুৰ ফুটি উঠিছে। দেউতাকে যেতিয়া কয় যে হার্বাৰ ষ্ট্ৰীটত যিটো ধুনীয়া ঘৰ আছে তাত ৰেজিনা থাকিলে কেপ্তেইন বোৰৰ আহি ভাল পাব আৰু পছন্দ হ'লে তাইক বিয়াই পাতিব। এনে কথাত ৰেজিনাৰ খং উঠে আৰু এনেদৰে কয়-

"ৰেজিনা (আগ বাঢ়ি)। ওলোৱা বুলিছোঁ এতিয়াই"। (বৰা ৯)

ইংৰাজী নাটকত থকা সহজ সৰল সংলাপ কেতিয়াবা অনুবাদত অধিক স্পষ্টভাৱে দেখুৱাব বিচাৰিছে। ফলত মূল ভাৱটো অধিক স্পষ্ট হৈছে-

ENGSRAND. "So help me God if I've ever used such a dirty word." (Nagpal 6)।

ইয়াত দেউতাকে কয় যে যদি কেতিয়াবা বেয়া শব্দৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে তেন্তে ভগৱানে যাতে তেওঁক সহায় অর্থাৎ ক্ষমা কৰি দিয়ে। কিন্তু অনুবাদত দেউতাকে যে এনে শব্দ কেতিয়াও ব্যৱহাৰ নাই কৰা এই কথা বুজাব বিচাৰিছে এনেদৰে-

এংষ্ট্ৰাণ্ড। "হেৰৌ আইটি! মূৰকে খাবলৈ মই কেতিয়াও তেনেকুৱা অশ্লীল শব্দ ব্যৱহাৰ কৰা নাই"।

একেটা সংলাপৰ উত্তৰত ৰেজিনাই এনেদৰে কৈছে-

"Oh, I haven't forgotten the word you used". (Nagpal 6)

কিন্তু অনুবাদত অনুবাদকে আগৰ বাক্যটিৰ লগত সংগতি ৰাখি সংলাপৰ পৰিৱর্তন কৰিছে-

"ৰেজিনা। শব্দটো তেহেলৈ যিহকে হওক লাগিলে, সেইটো কথা কেলৈ লাগিছে"।

(বৰা ৫)

একেদৰে এংষ্টাণ্ডে যেতিয়া জীয়েকক কয় যে তেওঁৰ লগত সাত, আঠশ ক্রাউন আছে। জীয়েকে তেতিয়া কয় যে-

REGINA. "That's not so bad."

(Nagpal 8)

আক্ষৰিক অর্থ অনুসৰি জীয়েকে কয় যে এইটো বেয়া নহয়। অনুবাদকে ইয়াত একেটা কথাকেই বুজাই কৈছে যে-

ৰেজিনা। "নিচেই কম বুলিব নোৱাৰে"।

পইচাটো যেতিয়া ৰেজিনাক দিব পাৰিব নেকি সোধে বাপেকে তেতিয়া কয়-

ENGSTRAND- "No I don't think I might" (Nagpal 8)

অর্থাৎ বাপেকে কয় যে তেওঁ এইটো নাভাবে যে তেওঁ দিব পাৰিব। কিন্তু অনুবাদত এনেদৰে আছে-

এংষ্ট্রাণ্ড। "তোক দিবলৈ হ'লে মই মৰি যাম"।

(ৰৰা ৮)

ইংৰাজী নাটতকৈ যেন ইয়াত এংষ্ট্রাণ্ডৰ মনৰ ভাৱ অধিক স্পষ্ট হৈছে। তেওঁ কোনোপধ্যে পইচাখিনি জীয়েকক দিব নোৱাৰে লাগিলে মৰিয়েই যাব তথাপি তেওঁ দিব নোৱাৰে।

ভাৰতীয় সমাজত ডাঙৰক নাম কাঢ়ি মতা নহয়। নামেৰে মাতিলে অসন্মান কৰা বুজাই আনহাতে পাশ্চাত্য সমাজ ব্যৱস্থাত এনে কোনো নিয়ম নাই সেয়ে তেওঁলোকে পুৰোহিতজনক নাম কাঢ়ি 'মেণ্ডার্চ' বুলি মাতিছে। একেদৰে কাম কৰা মিস্ত্রীয়ে মালিকক 'মিচ এলৰিং' সম্বোধন কৰিছে। অনুবাদকে সম্ভৱত সেই কাৰণেই নামৰ পৰিৱর্তে সম্বোধনৰ ব্যৱহাৰ কৰিছে। মিস্ত্রী এংষ্ট্রাণ্ডে সেয়ে পুৰোহিতক 'ডাঙৰীয়া', মিচ এলৰিঙক 'আইদেউ', আৰু এলৰিঙৰ পুতেকক 'ডেকা দেউতা' সম্বোধন কৰিছে।

ফকৰা-যোজনা, জতুৱা ঠাঁচ, বিভিন্ন ধৰণৰ উপমা অনুবাদৰ ক্ষেত্রত অনুবাদকজনে বহুসময়ত সমস্যাৰ মুখামুখি হয়। কিয়নো এইবোৰ আমাৰ সমাজৰ ৰীতি নীতি আদিৰ লগত জড়িত। যিহেতু ঠাইভেদে সমাজ ব্যৱস্থাৰ ভিন্নতা আছে সেয়ে অনুবাদকে লক্ষ্য ভাষাৰ পাঠকে বুজাকৈ এনেবোৰ বাক্য অনুবাদ কৰিব লগা হয়। দুয়োটা ভাষাতে একেধৰনৰ এনে জতুৱা ঠাঁচ নাথাকিলে একে অর্থ বুজোৱা জতুৱা ঠাঁচ বা খণ্ড বাক্যৰ সহায় লয়। ঘোষ্ট নাটকত এনে বহুতো জতুৱা ঠাঁচ আৰু উপমাবাচক শব্দ আছে যিবোৰ অনুবাদকে ইয়াত কৌশলগতভাৱে প্রয়োগ কৰিছে। পুৰোহিতে এডাল মম নুনুমুৱাকৈ খৰিৰ দ'মত পেলাই দিয়া মিস্ত্রীজনে দেখিছিল। এই সামান্য টুকুৰাটোৰ পৰাই অনাথ আশ্রমখন জ্বলি ছাইত পৰিণত হৈছিল। এই সৰু টুকুৰাটোৰ বাবেই 'Much Damege' হোৱা কথাটো অনুবাদকে এনেদৰে কৈছে-

এংষ্ট্রাণ্ড। "ঠিক, আপুনি সচৰাচৰ তেনে নকৰে কাৰণেহে আচৰিত হৈছিলো। কিন্তু কোনে নো বাৰু ভাবিব পাৰে যে এনে খাণ্ডৰদাহ ঘটিব পাৰে"। (ৰৰা ৭৪)

অর্থাৎ ইয়াত 'Much Damege'ৰ অর্থ খাণ্ডৰ দাহেৰে তুলনা কৰিছে।

সংলাপবোৰত অতিৰিক্ত বিশেষণৰ সংযোজন অনুবাদকৰ নিজা সৃষ্টি। ডাক্তৰজনে যেতিয়া অছৱাল্ডক

বেমাৰটোৱে দ্বিতীয়বাৰ দেখা দিলে ভাল হোৱাৰ কোনো আশা নাথাকিব বুলি মাকক কয় তেতিয়া মাকে ডাক্তৰজনক ‘Heartless’ বুলি কৈছে। অনুবাদকে হৃদয়হীন বুলি নকৈ ‘পাষাণ হৃদয়হীন’ বুলি কৈছে। দৰাচলতে পাষাণ শব্দটোৱে বেয়া মানুহ, পাষণ্ড ইত্যাদি বুজাই। কিন্তু ইয়াত তেওঁ পাষাণ হৃদয় বুলি ক’লেও সঠিক অর্থই বুজালেহেতেন। তদুপৰি বেমাৰৰ বিষয়ে জানিবলৈ অছৱাল্ডে নিজেই নেৰানেপেৰাকৈ লাগি থকা কথাটিক জোক লগা দি লাগি লাগিহে উলিয়াইছে। ইংৰাজী নাটত এনে কোনো জোকৰ লগত তুলনা কৰা হোৱা নাই।

আনহাতে কিছুমান ঠাইত ইংৰাজী নাটত যিবোৰ তুলনা দিয়া আছে অনুবাদতো একেদৰে ৰাখিবলৈ চেষ্টা কৰিছে-

REGINA. “I’ll bet!” (Nagpal 8)

অর্থাৎ মই বাজি মাৰিম। ইয়াত এটা শব্দৰে প্রকাশ কৰিছে-

ৰেজিনা। “নিশ্চয়, নিশ্চয় (বৰা ৭)

একেদৰে এংষ্ট্রাণ্ডে ৰেজিনাক কয় যে ঘৰখনত তিৰোতা মানুহ এজনীৰ খুবেই প্রয়োজন-

“But there’ve got to be women on the premises, that’s clear as day…” (Nagpal 8)

As clear dayৰ নিশ্চয়তা দিনৰ পোহৰৰ দৰে খাতাং কথা (বৰা ৭) বুলি নিশ্চয়তা প্রকাশ কৰিছে।

সামৰণিঃ

গতিকে দেখা যায় যে নাটকখন দৰাচলতে অভিযোজনাৰ পৰিৱর্তে আক্ষৰিক অনুবাদহে কৰিছে। ইয়াত শিৰোনাম, চৰিত্রৰ নাম, মঞ্চৰ কাৰুকার্য সংলাপবোৰ প্রায় একে ৰাখিছে। অৱশ্যে কোনো কোনো ঠাইত আমাৰ সমাজ জীৱনৰ লগত খাপ খোৱাকৈ, দর্শকে সহজে বুজিব পৰাকৈ উপমা, তুলনা ইত্যাদিবোৰ দাঙি ধৰা হৈছে। ঘোষ্ট নাটকৰ অসমীয়া অনুবাদ ভূতঃ এক অধ্যয়ন শীর্ষক বিষয়টো আলোচনাৰ অন্তত প্রাপ্ত সিদ্ধান্তসমূহ হৈছে-

(ক) মহেন্দ্র বৰাই ভূত নাটকখন মূলত আক্ষৰিক অনুবাদৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিছে যদিও মাজে মাজে

ভাৱানুবাদৰো সহায় লৈছে। যেনে-এংষ্ট্রাণ্ডক বাহিৰ হ’বলৈ কোৱাৰ পৰিৱর্তে ইয়াত প্রথমে জীয়েক ৰেজিনাই দেউতাকক কথা চুটি কৰিবলৈহে কয়।

(খ) উৎসভাষাৰ উপমা, জতুৱা ঠাঁচ আদিবোৰ লক্ষ্যভাষাৰ লগত খাপ খোৱাকৈ প্রয়োগ কৰিছে।

(গ) নাটকখন আক্ষৰিকভাৱে অনুবাদ হোৱা বাবে বহুসময়ত পাঠক আৰু দর্শকে কাহিনীৰ লগত কিছু পৰিমানে একাত্ম হোৱাত অসুবিধাৰ সৃষ্টি হৈছে।

(ঘ) অনুবাদ নাটক হিচাপে নাটকখনে মূল নাটকৰ বিষয়বস্তুৰ অর্থ বহনত সক্ষম হৈছে বুলি ক’ব পৰা যায়।

প্রসংগ সূত্র

(১) ভট্টাচার্য, তাৰিণীকান্ত। *ইবচেনৰ নাট্য প্রতিভা* পৃ. ১৫৯

(২) Nagpal, Payel (Ed)। *Henrik Ibsen GHOST*. p.77

(৩) বৰা, মহেন্দ্র। ভূতা পৃ. 8

(৪) ibid p.6

(৫) ওপৰোক্ত পৃ.৫

(৬) Ibid p.5

(৭) ওপৰোক্ত পৃ.৪

(৮) ওপৰোক্ত পৃ.৯

(৯) Ibid p.6

(১০) Ibid p.6

(১১) ওপৰোক্ত পৃ.৫

(১২) Ibid p.8

(১৩) Ibid p.8

(১৪) ওপৰোক্ত পৃ.৮

(১৫) ওপৰোক্ত পৃ.৭৪

(১৬) Ibid p.8

(১৭) ওপৰোক্ত পৃ.৭

(১৮) Ibid p.8

গ্ৰন্থপঞ্জী

(ক) বৰা, মহেন্দ্ৰ। ভূতা নতুন দিল্লীঃ সাহিত্য অকাডেমী। ১৯৬৫।

(খ) ভট্টাচার্য, তাৰিণীকান্ত। *ইবচেনৰ নাট্য প্ৰতিভা* গুৱাহাটীঃ অসম প্ৰকাশন পৰিষদ। মে, ২০১৫।

(গ) ভট্টাচার্য, পৰাগ কুমাৰ। *পাশ্চাত্য সাহিত্য অধ্যয়ন আৰু অনুবাদ* গুৱাহাটীঃ বনলতা। জুলাই ২০১৬

(ঘ) শইকীয়া, অজিৎ। *ছশ বছৰীয়া অসমীয়া নাটক*/দুলিয়াজানঃ পথাৰ। নৱেম্বৰ, ২০১৪।

(ঙ) শর্মা, সত্যেন্দ্রনাথ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*/গুৱাহাটীঃ সৌমাৰ প্ৰকাশ। ২০২০।

(চ) Nagpal, Payel (Ed). *Henrik Ibsen GHOST*. Delhi 7: Sachin for Book land Publishing Co. 2015

(ছ) Tytler, Alexander Fraser. *On the principles of translation*. New York: J.M Dent & Sons Limited. 1907.

যোগাযোগৰ ঠিকনা – গৱেষিকা, অসমীয়া বিভাগ,
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়

e.mail. baruahbhaswati904@gmail.com

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোং দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জুন, 2024

উজনি অসমৰ মেচ কছাৰীসকলৰ খাদ্যাভ্যাস- এক অৱলোকন

গায়ত্রী খাৰঘৰীয়া

সাৰাংশ :

অসমৰ প্ৰাচীন জনগোষ্ঠীৰ অন্যতম তথা মংগোলীয় জনগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত মেচসকল বৃহৎ কছাৰী এক জনগোট হৈছে মেচ কছাৰীসকল। তেওঁলোকৰ বসতিস্থান ভাৰতৰ লগতে নেপাল, ভূটান, বাংলাদেশতো বিস্তৃত হৈ আছে। ভাৰতৰ হিমালয়ৰ পাদদেশ, পশ্চিমবঙ্গ, মেঘালয় আৰু অসমত মেচসকলৰ অৱস্থিতি দেখা যায়। অসমৰ বিভিন্ন জিলাৰ ভিতৰত মূলতঃ তিনিচুকীয়া, ডিব্রুগড়, শিৱসাগৰ, যোৰহাট, গোলাঘাট, কাৰ্বি আংলং, শোণিতপুৰ, নগাঁও, ধেমাজি, লখিমপুৰ আৰু গোৱালপাৰা জিলাত মেচসকলে অতীজৰেপৰা বসবাস কৰি আহিছে। অসমৰ পুৰণি জনগোষ্ঠী হ'লেও সময়ৰ লগত আগবাঢ়ি মেচসকলে নিজা সংস্কৃতিক সবল-সঠিক উপস্থাপনৰ ক্ষেত্ৰত পিছ পৰি থকা যেন বোধ হয়। জনসংখ্যাৰ দিশৰপৰাও মেচসকল বৰ শক্তিশালী নহয়। চিডনী এণ্ডেলেয়ে তেখেতৰ ১৯১১ চনত প্ৰকাশ কৰা The Kachari' নামৰ গ্ৰন্থত মেচসকলৰ জনসংখ্যা ৯৩,৯০০ জন বুলি উল্লেখ কৰিছিল। বৰ্তমান এই সংখ্যা বাঢ়িছে যদিও জনগোষ্ঠীটোৰ সামগ্ৰিক বিকাশ তথা প্ৰসাৰতাৰ বাবে এইয়া যথেষ্ট নহয়। উল্লেখযোগ্য যে, সামাজিক-সাংস্কৃতিক দিশত মেচসকলৰ স্বকীয় বৈশিষ্ট্য লক্ষ্য কৰা যায়। লোকাচাৰ-লোকবিশ্বাস, উৎসৱ-অনুষ্ঠান, লোকপৰিৱেশ্য কলাৰ লগতে ভৌতিক সংস্কৃতিৰ ক্ষেত্ৰত মেচসকলৰ স্বকীয়তা লক্ষণীয়। ভৌতিক সংস্কৃতিৰ অন্তৰ্গত ভাগ হ'ল খাদ্যাভ্যাস, আভৰণ-আৱৰণ তথা লোকস্থাপত্য। মেচসকলৰ মাজত খাদ্যাভ্যাস, আৱৰণ-আভৰণ তথা লোকস্থাপত্যৰ ক্ষেত্ৰত নিজা বৈশিষ্ট্য ৰক্ষিত হৈ থকা দেখা যায়। এই আলোচনাত মেচ কছাৰীসকলৰ ভৌতিক সংস্কৃতিৰ অন্যতম খাদ্যাভ্যাসৰ থুলমূল আভাস দিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে। তেওঁলোকৰ মাজত প্ৰচলিত বিবিধ আমিষ-নিৰামিষ খাদ্যৰ লগতে বিভিন্ন জলপান, জনগোষ্ঠীয় পানীয়, খাদ্যৰ লগত জড়িত ফকৰা ইয়াত সন্নিবিষ্ট কৰিবলৈ চেষ্টা কৰা হৈছে।

০.০ অৱতৰণিকা

ভৌতিক সংস্কৃতিৰ অন্যতম হৈছে খাদ্যাভাস। খাদ্যই মানুহৰ জীৱন প্ৰণালী, জীৱনী শক্তি আৰু শাৰিৰীক-মানসিক ভাৱসাম্য অটুট ৰাখে। উল্লেখযোগ্য যে, কোনো এটা জাতিৰ বা জনগোষ্ঠীৰ ভাষা-সাহিত্য, সমাজ পৰম্পৰা, উৎসৱ তথা ধৰ্মীয় পৰম্পৰাৰ লগত প্ৰত্যক্ষ বা পৰোক্ষভাৱে খাদ্য জড়িত হৈ থাকে।

চৰ্ব, চুষ্য, লেহ্য আৰু পেয় অৰ্থাৎ চোবাই খোৱা, চুহি খোৱা, চেলেকি খোৱা আৰু পি খোৱা- এই চাৰি প্ৰকাৰৰ খাদ্য আহাৰ হিচাপে স্বীকৃত। আহাৰ আৰু খাদ্যৰ ধাৰণা যদি চোৱা যায় তেনে এই কথা ক'ব পাৰি যে, সাধাৰণতে খাদ্য বুলিলে খোৱাৰ উপযোগী আৰু পুষ্টিকৰ গুণযুক্ত গোটা বা জুলীয়া বস্তুকে বুজা যায়। আনহাতে আহাৰ বুলিলে শৰীৰৰ প্ৰয়োজন অনুসৰি দিনটোত খোৱা খাদ্য।[১]

যিকোনো জনসম্প্ৰদায়ৰ খাদ্যাভাসৰ বিষয়ে আলোচনা কৰোতে খাদ্য আৰু আহাৰ দুয়োটা ক্ষেত্ৰতে আলোচনা কৰা হয়। উল্লেখযোগ্য যে, অৰ্থনীতিৰ ধাৰা আৰু ভৌগোলিক পৰিবেশে বহু সময়ত জাতি-জনগোষ্ঠী একোটাৰ বিভিন্ন বৈষয়িক বিষয়ৰ লগতে খাদ্যৰ ক্ষেত্ৰতো প্ৰভাৱ পেলায়। অসমৰ প্ৰাচীন জনগোষ্ঠীৰ অন্যতম মেচ-কছাৰীসকল অতীজৰে পৰা নদী উপত্যকাৰ কাষত বসবাস কৰি অহা পৰিলক্ষিত হৈছে। যাৰ বাবে তেওঁলোকৰ খাদ্যাভাসত বাসস্থানকেন্দ্ৰিক প্ৰভাৱ তথা নদীকেন্দ্ৰিক পৰিবেশৰ প্ৰভাৱ বিৰাজমান। মেচ কছাৰীসকল মূলতঃ কৃষিজীৱী। যাৰবাবে তেওঁলোকৰ প্ৰধান খাদ্য হ'ল ভাত। খেতি পথাৰত কৃষিজীৱী মেচসকলে বিভিন্ন শস্যৰ খেতি কৰে। এইসমূহৰ ভিতৰত ৰঙা আহু ধান, বগা আহু ধান, মালভোগ ধান, লাহি ধান, বাও ধান, শালি ধান, আহোম শালি, জাহিংগা ধান, বৰা ধান, সুৱাগমণি ধান, আহু বৰা, ক'লা জহা, কণ জহা, মাণিকী জহা আদি ধান অন্যতম। ভাতৰ ক্ষেত্ৰত মেচসকলে আৰৈ আৰু উখোৱা (উহোৱা) চাউলৰে ব্যৱহাৰ কৰে। সেই অনুসৰি ব্যঞ্জনবোৰ পয়োভৰ দেখা যায়। মেচসকলে সাধাৰণতে ঢেঁকী বা উৰালত খুন্দা চাউলৰ ভাত খাই বেছি ভাল পায়। অৱশ্যে বৰ্তমান সময়ত মেচিন অথবা মিলত খুন্দা চাউলৰ ভাতেই প্ৰাধান্য পায়। মেচসকলে বিভিন্ন ধৰণৰ আমিষ-নিৰামিষ, শাক-পাছলি, পোক-পতংগ তথা পানীয় খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হয়। প্ৰত্যেকবিধ ব্যঞ্জন মেচসকলে নিজা ধৰণেৰে সুস্বাদু কৰি লয়। খাদ্যাভাসত তেওঁলোকৰ স্বকীয়তা দেখা যায়।

০.১ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য আৰু গুৰুত্ব

এই বিষয়ৰ অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য হ'ল-

ক) মেচ কছাৰীসকলৰ বিবিধ খাদ্যৰ উমান পোৱাৰ উদ্দেশ্য

খ) মেচ সমাজত প্ৰচলিত পানীয় 'জৌ বা জঙা'ৰ ব্যৱহাৰ তথা প্ৰস্তুত প্ৰণালী বিষয়ে জনাৰ উদ্দেশ্য

গ) খাদ্যাভ্যাসলৈ অহা পৰিৱৰ্তনৰ বিষয়ে জনাৰ উদ্দেশ্য

ঘ) মেচসকলৰ লোকসাহিত্যত খাদ্যদ্ৰব্যৰ স্থান আছে নে নাই জনাৰ উদ্দেশ্য।

এনে আলোচনাৰ বিদ্যায়তনিক গুৰুত্ব আছে। মেচসকলৰ বিষয়ে ছাত্ৰ-ছাত্ৰীৰ লগতে সংস্কৃতি অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত আগ্ৰহী

গৱেষকৰ দৃষ্টি আকর্ষণ কৰাৰ ক্ষেত্ৰত এনে বিষয়ৰ আলোচনাৰ গুৰুত্ব আছে।

০.২ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু পৰিসৰ

বিষয়টো আলোচনাৰ বাবে মূলতঃ বর্ণনাত্মক

পদ্ধতিৰ সহায় লোৱা হৈছে। লগতে সীমিত পৰিসৰৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি এই আলোচনাত কেৱল উজনি অসমৰ মেচসকলক নির্বাচন কৰি তেওঁলোকৰ ভৌতিক সংস্কৃতিৰ অন্যতম খাদ্যাভ্যাসক আলোচনাৰ চেষ্টা কৰা হৈছে।

১.০০ মেচ কছাৰীসকলৰ খাদ্যাভ্যাস

মূল খাদ্য হিচাপে ভাত গ্ৰহণ কৰা মেচসকলৰ খাদ্যত মূলতঃ ভাতকেন্দ্রিক বিবিধ উপকৰণ জড়িত হৈ থাকে। মূলতঃ আমিষভোজী মেচসকলে নিৰামিষ খাদ্য হিচাপে বিভিন্ন আঞ্জা, শাক-পাচলি গ্ৰহণ কৰে। তেওঁলোকে শুকুৰাই, সিজাই, পুৰি, ৰান্ধি বিভিন্ন খাদ্য আহাৰ হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। মেচসকলৰ খাদ্যাভ্যাসক আলোচনাৰ সুবিধা বাবে এইদৰে ভাগ কৰি লোৱা হ'ল-

১) মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত আমিষ-নিৰামিষ খাদ্য

২) মেচ কছাৰীসকলৰ পৰম্পৰাগত আঞ্জা

৩) মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত বিভিন্ন পিঠা-পনা আৰু জলপান

৪) জনগোষ্ঠীয় পানীয়

৫) খাদ্যৰ লগত জড়িত ফকৰা, পটন্তৰ, যোজনা

১.০১ মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত প্ৰচলিত আমিষ-নিৰামিষ খাদ্য :

মেচ কছাৰীসকল মুলতঃ আমিষভোজী। মাছ-মাংস নহ'লে জানজাতীয় লোকসকলে খোৱাত ৰুচিবোধ নজন্মে বুলি ভাবে। সেইবাবে বিভিন্ন প্ৰকাৰে মাছ মাংস সংগ্ৰহ কৰে আৰু আকালৰ দিনৰ বাবেও সংৰক্ষণ কৰিও থয়। মেচসকল নদীকেন্দ্রিক পৰিবেশত বাস কৰা জনগোষ্ঠী। তেওঁলোকে বিভিন্ন প্ৰকাৰৰ মাছৰ লগতে শামুক, কেঁকোৰা, বেং, জাবাংকৰি, নিংকৰিকে আদি কৰি বিভিন্ন ধৰণৰ পোক-পতংগ তথা মাংস খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। জাপাপুক বা জাবাংকৰি আৰু কেঁকোৰা পিহি চাতনি কৰি খাই ভাল পায়। তেওঁলোকে মাছ-মাংস সিজাই, শুকুৰাই আৰু পুৰি খাই ভাল পায়। খাদ্যত বেছি মা-মচলাৰ ব্যৱহাৰ নহয়। ভাপতে সিজোৱা স্বাস্থ্যসম্মত সোৱাদযুক্ত খাদ্য গ্ৰহণ কৰে।

মেচ কছাৰীসকলে ভাতৰ লগত মাছ-পুঠি কিবা এটা খাব বিচাৰে। মাছ ধৰিবৰ বাবে বিশেষ যতন যেনে- জাকৈ, পলহ, জাল, জুলুকি, চেপা আদিৰ ব্যৱহাৰ কৰে। কাৰৈ, গৰৈ, শিঙি-শিঙৰাকে আদি কৰি বিবিধ সৰু মাছৰ লগতে ডাঙৰ মাছৰ ভিতৰত ৰৌ, বাহু, আৰি, ৰৰালী আদি বিভিন্ন মাছ তেওঁলোকে খায়। মাছৰ ব্যঞ্জন বুলিলেই মাছৰ টেঙা বিশেষকৈ টেঙামৰা বা মেস্তা টেঙাৰ লগত, শুকান থেকেৰাৰ লগত জুতি মিলায়। একেদৰে টিকনি ৰৰুৱা, ভেদাইলতা, মানিমুনি, মাটিকান্দুৰি, খুতুৰা, লেহেতী, নলটেঙা, টেঙেচি, ঢেঁকিয়া আদিৰ লগতো জুতি অনুসৰি সৰু, ডাঙৰ মাছ ৰান্ধি খায়। পোনা মাছ, মোৱা মাছ কলপাত, আদা পাত আদিত ৰান্ধি ভাপতে সিজাই বা জুই

সেকি খৰিচা, জলকীয়া দি পিতিকি খায় খুব সোৱাদ পায়। পোঁৱাতী মহিলাক শুকলতিৰ লগত মাছ ৰান্ধি খুৱায়।

মেচ কছাৰীসকলে ঘৰতে বিবিধ জীৱ-জন্তু যেনে-হাঁহ, কুকুৰা, পাৰ, গাহৰি, ছাগলী আদি পোহে। যিসমূহক তেওঁলোকে খাদ্য হিচাপেও গ্ৰহণ কৰে। প্ৰত্যেকবিধ মাংসকে বিভিন্ন ধৰণেৰে জুতি লগাকৈ ৰান্ধি খায়। হাঁহৰ মাংস মেচ কছাৰীসকলে কোমোৰা দি ৰান্ধি খোৱাৰ লগতে মাহ দিওঁ ৰান্ধি খায়। লগতে হাঁহ মাংসৰ শুকান ভাজি, পিঠাগুৰি দিয়া হাঁহৰ মাংস অন্যতম প্ৰিয় ব্যঞ্জন। মাংসৰ ভিতৰত গাহৰি মাংস তেওঁলোকৰ প্ৰিয়। মেচ কছাৰীসকলে গাহৰি মাংস সিজাই, পুৰি, শুকুৰাই আৰু ভাজি খাই ভাল পায়। গাহৰি মাংসৰ লগত খাৰ দি ৰন্ধা আঞ্জা তেওঁলোকৰ বাবে প্ৰিয়। লগতে শুকুৰাই থোৱা গাহৰি মাংস বাঁহৰ গাজ বা খৰিচা দি নতুবা জুইত পুৰিও খায়। লগতে সিজোৱা গাহৰি মাংসৰ আদৰো তেওঁলোকৰ মাজত দেখা যায়। বিলাহী, জলকীয়া, আদা, নহৰু আৰু বনৰীয়া মছলা পাত ব্যৱহাৰ কৰি তেলবিহীন ভাবে গাহৰি মাংস সিজাই খায়। তাৰ লগতে গাহৰি মাংসৰ লগত মাটিমাহৰ খাৰ দি ৰন্ধা ব্যঞ্জন মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত জনপ্ৰিয়। পূৰ্বতে বিশেষ উপলক্ষত তেঁওলোকে ম'হৰ মাংস খোৱাৰ কথা পোৱা যায় যদিও বৰ্তমানত মেচসকলে ম'হৰ মাংস খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ নকৰে।

জনগোষ্ঠীয় সমাজত পলু(worm) ক খাদ্য হিচাপে অতীতৰপৰা গ্ৰহণ কৰি আহিছে। মেচসকলেও সিজাই, ভাজি পলুৰ লেটা খায়। বয়নে শিল্পৰ লগত জড়িত মেচসকলে বহু সময়ত পলু পোহা দেখা যায়। পূৰ্বতে ইয়াৰ প্ৰভাৱ বেছি আছিল যদিও আজিকালি বিভিন্ন কাৰণত পলু পোহা কম হৈছে। অৱশ্যে খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰিবৰ বাবে পলু পোহে। পাত পলু, এৰী পলু, মুগা পলুৰ ভাজি তেওঁলোকৰ বাবে প্ৰিয়। তাৰ লগতে আমৰলি পৰুৱাৰ টোপ, কদু, বৰল আদিৰ টোপো খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। এইসমূহ খাদ্য হিচাপে যথেষ্ট স্বাস্থ্যসন্মত তথা প্ৰটিন সম্পন্ন। আমৰলী পৰুৱাৰ টোপ মেচসকলে কণী, বিলাহী বা পিয়াঁজৰ সৈতে সুস্বাদুকৈ ৰান্ধি গ্ৰহণ কৰে। বৰল বা কদু টোপ ভাজি বা ৰান্ধি খায়। পোক পতংগকো মেচসকলে খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। জাবাংকৰি, নিঙকৰি, ফৰিং আদিকো সুস্বাদু ব্যঞ্জনৰ দৰে গ্ৰহণ কৰে। একেদৰে শামুকো বিবিধ ধৰণেৰে ৰান্ধি মেচসকলৰ বাবে খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। মাটিমাহৰ লগত শামুকৰ ব্যঞ্জন তেওঁলোকৰ প্ৰিয়। কুচীয়া (Eel fish) মাছক খুবেই ঔষধি গুণযুক্ত খাদ্য হিচাপে গণ্য কৰা হয়। অসমৰ বিবিধ জনগোষ্ঠীয় লোকে কুচীয়াক খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। মেচ কছাৰীসকলেও কুচিয়া মাংসৰ সুস্বাদু ব্যঞ্জন তৈয়াৰ কৰি সোৱাদ লয়। শুকান মাছ বা শুকতি প্ৰায়সকল মেচ কছাৰী লোকৰ ঘৰতে উপলব্ধ। শুকতিক মেচসকলে 'মানথু' বুলি কয়। মাছ শুকুৰাই বাঁহৰ চুঙা বা কলহত থৈ দীৰ্ঘদিন ব্যৱহাৰ কৰে। ইয়াক বিবিধ উপকৰণেৰে জুতি লগাকৈ ৰান্ধি তেওঁলোকে খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। আদা, নহৰু, কচুঠুৰি, তেজমুৰিৰ আগ আদি শুকান মাছৰ লগত ঢেঁকী বা উৰালত খুন্দি বাঁহৰ চুঙাত ভৰাই থৈ প্ৰস্তুত কৰা শুকতি মেচসকলৰ অন্যতম প্ৰিয়। এইখিনি তেওঁলোকে সংৰক্ষণ কৰে আৰু মাছৰ আকালৰ দিনত জুতিলগাকৈ ৰান্ধি খায়। একেদৰে মেচসকলে গুনদুৰুক নামেৰে এবিধ আচাৰ

খায়। ইয়াত লাইশাক, মূলাশাক আদিৰ দিনত এইসমূহ অধিক পৰিমাণত শুকুৱাই চুঙাত ভৰাই থয় আৰু আকালৰ সময়ত আচাৰৰ দৰে খায়।

১.০২ মেচ কছাৰীসকলৰ পৰম্পৰাগত আঞ্জা : মেচসকলৰ প্ৰধান খাদ্য যিহেতু ভাত গতিকে বেছিভাগ ব্যঞ্জন ভাতৰ লগত খাবৰ বাবেই ৰন্ধা হয়। বিভিন্ন ধৰণৰ আঞ্জাই মেচসকলৰ খাদ্যাভাসত বিশেষ স্থান লাভ কৰে। সিজাই বা ৰান্ধি খোৱা খাদ্যৰ লগত পিঠাগুৰিৰ ব্যৱহাৰ মন কৰিবলগীয়া। লাই শাক, টেঙামৰা বা মেচতা টেঙা, ৰঙালাওৰ আগ, চাজিনা গছৰ কুমলীয়া পাত, মৰাপাটৰ তিতা আগ আদিৰ লগত পিঠাগুৰি দি ব্যঞ্জন ৰান্ধি খায়। এনেধৰণৰ আঞ্জাক পিঠালী আঞ্জা বুলি তেওঁলোকে কয়।[২] পিঠাগুৰি দিয়া আঞ্জাত শুকান মাছ বা উতলি থকা আঞ্জাত কেঁচা মাছ দি ৰন্ধা আঞ্জাও অন্যতম প্ৰিয়। তাৰ লগতে বাঁহৰ গাজৰ লগতো পিঠাগুৰি আৰু খাৰ দি আঞ্জা ৰান্ধি মেচ কছাৰীসকলে খায়। মাটি দাইলৰ লগত আঠিয়া কলৰ কলাখাৰ দি আঞ্জা ৰন্ধা হয়।

জনজাতীয় লোকসকলে ভূমিজাত দ্ৰব্যবিলাকক শাকৰূপে ব্যৱহাৰ কৰে।[৩] মেচসকলো ইয়াৰ ব্যতিক্ৰম নহয়। তেওঁলোকে

মাটিমাহ আৰু চেৰেলি শাকৰ আঞ্জা, মাছৰ লগত টেঙাৰ আঞ্জা, বিভিন্ন থলুৱা শাক আঞ্জা, যেনে: ভেদাই লতা, কপৌ ঢেঁকীয়া, মানিমুনি, শিমলু আলু, তৰা গাজ, বেতৰ গাজ, মেটেকা কলি, শুকলতি আদি ঔষধি গুণযুক্ত শাকৰ লগতে মধুসুলেং, খুতৰা, মাটিকান্দুৰী, বাবৰি আদিৰ আঞ্জাও খুবেই সুস্বাদুকৈ ৰান্ধি খায়। কল পচলাকো মেচসকলে আঞ্জা হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। কলপচলাৰ লগতে কচুশাকো বিভিন্ন ধৰণেৰে জুতি লগাই খায়। ‘গাহৰিয়ে নোখোৱা কচু আৰু বেত কচুৰ বাদে মেচসকলে সকলো কচু খাদ্য হিচাপে মেচসকলে সকলো কচু খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰে। সোৱাদযুক্ত বিভিন্ন কচুৰ ভিতৰত ক’লা কচু (পাত কচু), দহি কচু, বৰ কচু, ভক কচু, নল কচু, নীল কচু, ওল কচু, মনা কচু, মান কচু, পাঁচমুখীয়া কচু, কণী কচু অন্যতম। এই কচুসমূহৰ কোনোটোৰ পাত, কোনোটোৰ ডাল, কোনোটোৰ টেপু খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হয়। কম তেল আৰু মছলাবিহীন এই আঞ্জাসমূহ সুস্বাদু হোৱাৰ লগতে স্বাস্থ্যসন্মতো হয়।

১.০৩ বিবিধ পিঠা পনা আৰু জলপান

উৎসৱৰ সময়তে হওক বা বছৰৰ অন্যান্য সময়তে হওক মেচ কছাৰীসকলে বিবিধ পিঠা-পনা বনাই চাহৰ লগত বা পাতলীয়া খাদ্য হিচাপে গ্ৰহণ কৰি আহিছে। পিঠা অসমীয়া খাদ্য জীৱনৰ অন্যতম অংগ।মেচসকলেও চাউলৰ গুৰিৰ বিভিন্ন পিঠা সিজাই,পুৰি, তেলত ভাজি খায়। বিভিন্ন পিঠাসমূহৰ ভিতৰত তিলপিঠা, ঘিলা পিঠা, জেং পিঠা, সুতুলি পিঠা, টেকেলি পিঠা, খোলা চাপৰি পিঠা, খৰাহী পিঠা, কল পিঠা, পিঠাগুৰিৰ মিঠৈ অন্যতম। চাউল ঢেঁকীত খুন্দি পিঠাগুৰি কৰি তাৰে নানান ধৰণৰ বৰ পিঠা, চাপৰি পিঠা, ঘিলা পিঠা, ধুম পিঠা, খোলা পিঠা আদি গুৰ, তিল আৰু ঘিঁউ দি ভাপতে তৈয়াৰ কৰি সোৱাদ লয়। লগতে চাউলৰপৰা সান্দহ আৰু কৰাই তৈয়াৰ কৰে। মেচ কছাৰীসকলে বৰা,জহা আদি সোৱাদ লগা চাউলৰপৰা বিবিধ জলপান তৈয়াৰ কৰিব জানে। এনে

সোৱাদযুক্ত চাউল ভাপত দি ‘ছয়াদিয়া ভাত’[৪] তৈয়াৰ কৰি দৈ, গাখীৰ বা মাংসৰ লগত জুতি লয়। তাৰলগতে তেওঁলোকে চাউলৰপৰা উৎকৃষ্ট কোমল চাউলৰ জলপান তৈয়াৰ কৰিব জানে। চিৰা, পিঠা,কোমল চাউল আদিৰ লগত গুৰ, দৈ, গাখীৰ আদিৰ সৈতে জুতি লগায় খায়।

১.০৪ জনগোষ্ঠীয় পানীয়

অন্যান্য জনগোষ্ঠীৰ দৰে মেচ কছাৰীসকলেও তেওঁলোকৰ জনগোষ্ঠীয় পানীয় বিবিধ উৎসৱ অনুষ্ঠানত পৰিবেশন কৰে। একেদৰে জন্ম মৃত্যু বিবাহৰ লগতো এই পানীয় পৰিবেশন কৰা হয়। মেছ কছাৰীসকলে মদক বা এই বিশেষ পানীয়বিধক জৌ বুলি কয়। অৱশ্যে অন্যান্য কছাৰীসমাজতো মদক জৌ বুলিয়ে কোৱা হয়। জৌ তৈয়াৰ কৰাৰ কিছু প্রণালী আছে। জৌ প্রস্তুত কৰিবলৈ প্রয়োজন হয় চাউলৰ গুড়ি আৰু বন-লতা পাতেৰে তৈয়াৰী দৰব বা বাখৰ। পৰম্পৰা অনুসৰি এশ এবিধ শাক বা পাতেৰে এই বাখৰ প্রস্তুত কৰা হয় যদিও আজিকালি সকলো পাত পোৱা কঠিন বাবে যিসমূহ পাত পোৱা যায় তাৰদ্বাৰাই জৌ প্রস্তুত কৰা হয়। সাধাৰণতে বাখৰ তৈয়াৰ কৰিবলৈ চাউলৰ পিঠাগুৰি, কপৌ ঢেঁকীয়া, ধপা তিতা পাত, বিহলঙনি, হুৰাপাত, খৰখৰি, ঢকা মাহুদি, লতা মাহুদি, মদকী, আকৰ বিহ, তেজমুৰি, বিয়নী সাৱটা (সাপুটা), পাতি সূতা, মাইকী দেৱাই, হাড় জোৰোৱা দেৱাই, মাখিয়তী, দীঘলতী, কঠাল পাত, কুঁহিয়াৰ পাত, বন জালুক, হাঁচিয়তী, মখনা আদিৰ প্রয়োজন। ইয়াৰে যিসমূহ পাত পোৱা যায় সেইসমূহৰে ব্যৱহাৰ কৰি মদ বনোৱা গুটি বা বাখৰ তৈয়াৰ কৰা হয়। বুৰঞ্জী অনুসৰি কেঁকোৰা, কুঁচীয়া, মদ, গাহৰি আদি খোৱাৰ বাবে হাৰিয়া মেচৰ পুতেক বিশুৰে বিশ্বসিংহ নাম লৈ কমতা ৰাজ্য প্রতিষ্ঠা কৰাৰ পাছতে অভক্ষ্য ভক্ষণ নকৰিবলৈ কৈছিল।[৫] তাৰ পৰিপ্রেক্ষিততে মেচসকলৰ মাজত দুটা ফৈদৰ সৃষ্টি হ’ল। যিসকলে বিশ্বসিংহৰ আহ্বান শুনিলে তেঁওলোক ‘কোচ’ হ’ল আৰু বাকীসকল ‘মেচ কছাৰী’ হৈ থাকিল। অৱশ্যে পৰৱর্তী সময়ত কিছু মেচ লোক শংকৰী ধর্মত দীক্ষিত হৈ মদ-মাংস এৰি দিছে।

১.০৫ খাদ্যৰ লগত জড়িত ফকৰা, পটন্তৰ, যোজনা :

মেচ কছাৰীসকলৰ মাজত তেওঁলোকে গ্রহণ কৰা খাদ্যকেন্দ্রিক কিছুমান লোকসাহিত্যৰ ভাগ পোৱা যায়। তাৰে কেইটিমান উদাহৰণ হ’ল-

ক) এনেহেন মৰমত মৰো,
কলিহনা (খলিহনা) মাছৰ দুফালে দুচতি খাই
মাছৰ দখৰহে এৰোং। (ফকৰা)

খ) মই মৰিলুং কাৰলি খাই
তোক দিম লাই-লফা। (ফকৰা)

গ) মাছেৰে গা ধোৱা।

ঘ) মাছৰ লৰফৰ বামী,
ভাৰৰ লৰফৰ সাঙি। (পটন্তৰ)

ঙ) শাক শোকলতি দিনত বাছে,
সেই ঘৰত যেনিবা লখিমী আহে।

চ) মাছ খাই চিনিবি বৰালি বা শীতল

টকিয়াই চিনিবি ধাতু কাঁহ বা পিতল।

এইসমূহ পুৰণি প্ৰজন্মৰ লগে লগে ক্ৰমাৎ হেৰাই যাবলৈ ধৰিছে। কথাই প্ৰতি ফকৰা মাতি কথা কোৱা প্ৰজন্মৰ বিপৰীতে বৰ্তমানৰ তথাকথিত নতুন প্ৰজন্ম এইসমূহ ফকৰাৰ লগত অভ্যস্ত নহয়। যাৰবাবে এইসমূহৰ সংৰক্ষণৰ প্ৰয়োজন হৈ পৰিছে।

ফকৰাসমূহৰ লগতে মেচ কছাৰীসকলৰ খাদ্যাভ্যাসকো বৰ্তমান নতুন ধৰণেৰে চোৱাৰ প্ৰয়োজন হৈ পৰিছে। কম তেলেৰে, কম মছলাৰে, সুস্বাদুকৈ স্বাস্থ্যসন্মতভাবে ৰন্ধা খাদ্যই মেচ কছাৰীসকলৰ সমাজত সমাদৰ লাভ কৰে যদিও বৰ্তমান সময়ত অন্য খাদ্য সংস্কৃতিৰদ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈ তেওঁলোকেও মাত্ৰাধিক তেল, মছলাৰ ব্যৱহাৰ কৰিবলৈ লৈছে। ন ন পেকেটিং মছলাৰ ব্যৱহাৰ তেওঁলোকৰ আমিষ খাদ্যত হোৱাটোৱে এই প্ৰভাৱকে সূচায়। তাৰলগতে বিশ্বায়নৰ প্ৰভাৱৰ বাবে অহা পৰিবৰ্তনৰ কথাও ক'ব লাগিব। চাওমিন, ম'ম', বাৰ্গাৰৰ দৰে খাদ্যও নতুন প্ৰজন্মৰ খাদ্যৰ তালিকাত সন্নিবিষ্ট হৈছে।

৪) ছয়াদিয়া ভাত- চেৰা দিয়া ভাত বুলিও কোৱা হয়। ৰৰা চাউল বা তেনে আঠাযুক্ত চাউল ভাপত সিজাই এই ভাত প্ৰস্তুত কৰা হয়। ছয়াদিয়া ভাত হাঁহ মাংস, কুকুৰা মাংস আদিৰ লগত খোৱাৰ লগতে দৈ, গাখীৰ, গুৰ আদিৰেও খোৱা হয়। খুবেই সুস্বাদু খাবলৈ।

৫) সমীৰণ মেচ, মেচ জনগোষ্ঠী আৰু সমাজ সংস্কৃতিৰ চমু পৰিচয়, পৃ- ৯৮

প্ৰসংগসূচী :

১) অংশুমান দাস, অসমৰ জনগোষ্ঠীয় লোকখাদ্য, ২০১২, পৃ – ২০

২) পিঠালী আঞ্জা- চাউলৰ গুৰি কৰি অৰ্থাৎ পিঠাগুৰি কৰি খাৰদি ৰান্ধি ডাইলৰ দৰে খায় - দীপিকা মেচ, গৃহিণী, ৰাণীপুৰ, ডিব্ৰুগড়

৩) অংশুমান দাস, প্ৰাগুক্ত, পৃ-১৯

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী :

দাস, অংশুমান। *অসমৰ জনগোষ্ঠীয় লোকখাদ্য।* ১ম প্ৰকাশ। গুৱাহাটী; আঁক বাক প্ৰকাশন, ২০১২। মুদ্ৰিত।

নাৰ্জি, ভবেন। বড়ো কছাৰীসকলৰ সমাজ আৰু সংস্কৃতি। ৩য় প্ৰকাশ। গুৱাহাটী; বীণা লাইব্ৰেৰী, ২০১৫। মুদ্ৰিত।

মেচ, সমিৰণ। মেচ জনগোষ্ঠী আৰু সমাজ সংস্কৃতিৰ চমু পৰিচয়। ১ম প্ৰকাশ। শিৱসাগৰ ; মেচ কছাৰী উন্নয়ন পৰিষদ, ২০১৩। মুদ্ৰিত।

স্মৃতিগ্ৰন্থ :

কছাৰী, ঘনকান্ত আৰু শচীন মেচ (সম্পা)। দম্বাবু, স্মৃতিগ্ৰন্থ ষষ্ঠ বাৰ্ষিক কেন্দ্ৰীয় প্ৰতিষ্ঠা দিৱস। গোলাঘাট, আদৰণী সমিতি ষষ্ঠ বাৰ্ষিক কেন্দ্ৰীয় প্ৰতিষ্ঠা দিৱস;২০১২। মুদ্ৰিত।

মেচ নিতুল (সম্পা)। শালস্তম্ভ, স্মৃতিগ্ৰন্থ, দ্বিতীয় মেচ কছাৰী সাংস্কৃতিক মহোৎসৱ। নুমলীগড়, গোলাঘাট। ২০১৪। মুদ্ৰিত।

মেচ, শচীন আৰু পুষ্পাঞ্জলী মেচ (সম্পা)। হিড়িম্বা, স্মৃতিগ্রন্থ, একাদশ বার্ষিক কেন্দ্রীয় প্রতিষ্ঠা দিৱস, মেচ কছাৰী জাতীয় পৰিষদ। ডিব্রুগড়, ২০১৭। মুদ্রিত।

যোগাযোগৰ ঠিকনা –

সহকাৰী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ

জৱাহৰলাল নেহৰু মহাবিদ্যালয়, বকো

gayatrikharghoriadu@gmail.com

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक: 8; जनवरी-जून, 2024

দেৱব্ৰত দাসৰ চুটিগল্পৰ কথনৰীতি

ড০ দীপামণি হালৈ মহন্ত

দেৱব্ৰত দাস উত্তৰ ৰামধেনু যুগৰ বিশিষ্ট গল্পকাৰ। আশীৰ দশকত 'অৰ্পিতাৰৰ এৰাতি' (১৯৮১) গল্পপুথিৰে গল্পকাৰ জীৱনৰ পাতনি মেলা দেৱব্ৰত দাসৰ গল্পৰ মূল বিষয় হৈছে আধুনিক মানৱৰ দ্বিধা, দ্বন্দ্ব, ভণ্ডামি, হতাশা আৰু নিসংগতা। পিছে তেওঁ সেই দ্বিধা-দ্বন্দ্ব-হতাশা-ভণ্ডামিক পোনপটীয়াকৈ নকৈ খণ্ডিতভাৱেহে কয়। সমালোচকৰ ভাষাত 'সৰল ৰৈখিক বৰ্ণনাৰ বিপৰীতে নাটকীয় চমৎকাৰিত্বই তেওঁৰ গল্পত ঠাই পায়।'' সেই চমৎকাৰিত্ব সৃষ্টিৰ বাবে তেওঁ কথন-বৰ্ণনত আধুনিক চিনেমাৰ মন্তাজ সদৃশ পদ্ধতি প্ৰয়োগ কৰিছে। প্ৰশ্ন হয়– তেওঁ শব্দৰ মাধ্যমত সেই চলচিত্ৰীয় কৌশল কিদৰে প্ৰয়োগ কৰিছে?

দেৱব্ৰত দাসৰ গল্পৰ কথনত অভিনৱত্ব আনিছে 'মই' কথকে। তেওঁৰ সকলো গল্পত 'মই' ৰূপত কথক আছে আৰু সেই 'মই'ৰ পৰিচয় বহুমাত্ৰিক।'মই' কেতিয়াবা গল্পৰ চৰিত্ৰ 'অৰ্পিতাৰ এৰাতি', 'ডেণ্ডনাত এজন প্ৰতিভু', 'অৰণ্যত কান্দোন-কাটোন', 'আশংকাৰে কবৰলৈ', 'মই যাক ভাল পাওঁ' আদি গল্পৰ 'মই' কথক এই শ্ৰেণীৰ। 'মই' কেতিয়াবা গল্পৰ বাহিৰৰ অংশ; যিয়ে বৃত্তৰ বাহিৰত থাকি সৰ্বজান্তা কথক ৰূপে কাৰ্য-ঘটনা বৰ্ণাইছে। 'মই' কেতিয়াবা গল্পকাৰ নিজেও; অৰ্থাৎ কথক গল্পকাৰ মিলি পৰি গল্প ৰচনাৰ পৃষ্ঠভূমি কৈছে আৰু কৌশলীভাৱে সেই পৃষ্ঠভূমি কৈছে আৰু কৌশলীভাৱে সেই পৃষ্ঠভূমিকো কাহিনী অংশই কৰি পেলাইছে। তুলাচনীত তাগিদা এটা', 'অপেক্ষাৰ উৰ্মিলা অথবা...', গল্পৰ কথন এই প্ৰকৃতিৰ। যাহওক 'মই' কথকে কোনো গল্পতে বিষয়বস্তু নিয়াৰি লগাই পাঠকক কোৱা নাই। টুকুৰা-টুকুৰাকৈহে কৈছে। ফলত গল্পবোৰ বেলেগ বেলেগ কাহিনীৰ অংশ জোৰা দি সজোৱা যেন লাগে; কাহিনীৰ সৰলৰৈখিক গতি নথকা যেন লাগে। সেয়ে পাঠকে সেই ক্ৰমটো নিজেই নিৰ্মাণ কৰি

ল'বলগীয়া হয় বা ঘটনাৰাজিক ক্ৰমত পেলাবলগীয়া হয়। এইখিনিতে দেৱব্ৰত দাসৰ গল্পই পাঠকৰ বুদ্ধি দীপ্ততা দাবী কৰে। পিছে

কাহিনীৰ কথন, ঘটনাৰ ক্ৰম সৰলৰৈখিক নোহোৱা বাবে জটিল যেন লগা গল্পবোৰৰ ভাষা তথা বৰ্ণনাশৈলী সহজ-সৰল। 'মই' কথকে অৰ্থাৎ প্ৰথম কওঁতাই অতি স্বাভাৱিকভাৱে সন্মুখত থকাজনৰ সৈতে কথা পতা ধৰণে কৈ থকাৰ দৰে কাহিনী খণ্ডিত ৰূপত আগবাঢ়িছে। য'ত ভাষাৰ আনুষ্ঠানিক ক্ৰম বা নিয়ম নাই, অনানুষ্ঠানিক ৰূপত দুজনে কথা পাতিলে যেনে ৰূপৰ হয়, বেছিভাগ ক্ষেত্ৰতে ভাষাৰ ৰূপ তেনে হৈছে। পঢ়িলে এনে লাগে যেন কোনোবাই কথাবোৰ কৈ আছে। যেনেঃ

"বহুদিন এটাও গল্প লিখিব পৰা নাই।
কেইবাখনো আলোচনীৰপৰা অনুৰোধ আহিছে।
কেইবাজনো সুহৃদ, বন্ধুস্থানীয় সম্পাদকৰপৰা
তাগাদা আহিছে। কিন্তু গল্প হ'লে মই লিখিব পৰা নাই। গল্পৰ
প্লট, চৰিত্ৰ বা ঘটনা এইবোৰ
কোনোপধ্যেই স্মৃতিৰ পৰা বা আন য'ৰেপৰা
হওক মোৰ মগজুৰ বা চিন্তাশক্তিত ভুমুকি
নেমাৰেইচোন আজিকালি।"
(লেঙেৰী বুঢ়ীৰ মৃত্যু ৰহস্য)

এই গল্পটোৰ এই কথাখিনি পঢ়িলে ভাব হয়-প্ৰায়ে কৰি থকা প্ৰিয় কাম এটি কৰিব নোৱাৰা ব্যক্তি এগৰাকীয়ে যেন তেওঁৰ ব্যৰ্থতা-হতাশা অস্থিৰতাৰ কথা পঢ়ুৱৈক সম্বোধি তেওঁৰ আগত কৈ আছে।

দেৱব্ৰত দাসে তেওঁৰ গল্পত পঢ়ুৱৈক স্বাধীনতা দিছে। কেতিয়াবা তথাকথিতভাৱে গল্পৰ সামৰণি নেপেলাই পঢ়ুৱৈক নিজৰ ধৰণে সমাপ্তি কল্পনা কৰিবলৈ এৰি দিছে। 'প্ৰেম এটা হাইকু কবিতা' গল্পটোৱে ইয়াৰ উদাহৰণৰূপে লব পাৰি। কোনো ঘটনা কেনি আগবাঢ়িব, চৰিত্ৰই কি কৰিব, সেয়া এটা ৰাস্তাৰে বা এটা ধৰণত তেওঁ কৈ দিয়া নাই, কেইবাটাও ধৰণে কৰিব পাৰে বুলি কথকৰ হতুৱাই পঢ়ুৱৈক ভবাই তুলিছে। ক'ব পাৰি- তেওঁ কথকৰ চিন্তাৰ মাজেৰে option বা বিকল্প উত্থাপন কৰে আৰু পঢ়ুৱৈক ভবাৰ অৱকাশ দিয়ে। সেইখিনিতে তেওঁৰ গল্পই পাঠকক চমকৃত কৰিও তোলে। এই বিকল্পবোধ সৃষ্টি কৰাৰ বাবে, পঢ়ুৱৈৰ চিন্তা-চেতনাক জোকাৰি দিবলৈ গল্পকাৰে প্ৰশ্নবাচকতাক এটা কৌশল হিচাপে প্ৰয়োগ কৰিছে। সেই প্ৰশ্নবাচকতা কথকৰ কথাতো আছে; চৰিত্ৰৰ মুখৰ কথাতো আছে। 'সুগন্ধি পখিলা ক'ত' গল্পটিত গল্পৰ নায়িকাৰ অন্বেষণত ৰত গল্পকাৰ কথকে মানৱীয় স্খলনক লৈ নিজৰ মনতে প্ৰশ্ন ভাবিছে এইবুলি-

''এনেতে মগনীয়াজনী বহি থকা ঠাইখিনিৰপৰা
এটা অসংবদ্ধ হুলস্থুল শুনা গ'ল। মই দেখিলোঁ–
মগনীয়াজনী চাট্‌কৈ ফুটপাথত পৰি গৈছে। অহা যোৱা কৰা
পদচাৰীবোৰে তাইক আগুৰি ধৰিছে । তাই মৰিব নেকি?
ইয়াত মৃত্যু ইমান সস্তানে?
প্ৰেম? প্ৰেমৰ দাম কিমান?''

দেৱব্ৰত দাসৰ প্ৰায়বোৰ গল্পৰ কথনত এনে প্ৰশ্নবাচক বাক্যৰ ভিৰ আছে। এই ভিৰে পাঠকক কাহিনী শুনাৰ প্ৰতি কৌতূহলী কৰি তোলে। 'তুলাচনীত তাগিদা এটা' গল্পটো চাওক। এই গল্পটোৰ দ্বিতীয় অনুচ্ছেদটোৰ পৰাই পাঠকৰ আগ্ৰহ বাঢ়িব ধৰে। কাৰণ তলৰ কথাখিনিঃ

''তাই ৰৈ থাকো। প্ৰায়েই ৰৈ থাকো। তাইৰ এই ৰৈ থকাটোৱে মোক ভবাই তোলে। তাই কাৰ বাবে ৰৈ থাকো। তাই কিহৰ বাবে ৰৈ থাকে? কোনোবাই কেতিয়াবা আহি তাইক তাইৰ বৰ্তমান দয়নীয় দশাটোৰ পৰা উদ্ধাৰ কৰি নিবহি বুলি ৰৈ থাকে নেকি? কি আশা হিয়াত পুহি ৰাখি তাই ৰৈ থাকে? তাইৰ এই ৰৈ থকাটোক লৈ এটা গল্প লিখি পেলাবলৈ মোৰ মন যায়। এটা নতুন তাগিদা মোৰ মনত জন্মো।''

গল্পটোৰ প্ৰথম অনুচ্ছেদত গল্পকাৰে পাঠকক বিগত যৌৱনা, কমনীয়তাৰ লেশমাত্ৰও নথকা ছোৱালীজনীৰ সৈতে পৰিচয় কৰাই দি এই দ্বিতীয় অনুচ্ছেদটোত ছোৱালীজনীৰ অপেক্ষাৰ কাৰণ সম্পৰ্কে কেইবাটাও প্ৰশ্ন উত্থাপন কৰিছে। যি প্ৰশ্নই পাঠকক সচেতনভাৱে পৰৱৰ্তী অংশ পঠনৰ বাবে প্ৰৰোচিত কৰিবলৈ সক্ষম হৈছে। একেটা গল্পতে গল্পৰ চৰিত্ৰই কথকক প্ৰেমৰ অৰ্থ বিচাৰি প্ৰশ্ন কৰিছে তলত দিয়া ধৰণেঃ

''কওকচোন বাৰু-প্ৰেম, ভালপোৱা এইবোৰৰ প্ৰকৃত অৰ্থ কি? ...প্ৰেম কৰিয়েই মই বিয়া কৰাইছোঁ।' কিন্তু এতিয়া মোৰ প্ৰশ্ন কৰিবলৈ মন গৈছে– বিয়াই নেকি প্ৰেমৰ একমাত্ৰ উদ্দেশ্য? তাৰ লগতে সামাজিক বন্ধন? সন্তান লাভ? গতানুগতিকতা? ইয়াতেই শেষ নেকি প্ৰেমৰ পৰিধি?...''

আচলতে এই প্ৰশ্ন কেৱল কথকলৈ নহয়; গল্পৰ অংশীভূত চৰিত্ৰৰ মাজত সীমাবদ্ধ হৈ নাথাকি ই পাঠকৰ চিন্তালৈকো সংক্ৰমিত হয় আৰু পাঠকক বিষয়ৰ মাজলৈ টানি আনে। উত্থাপিত বিষয়ৰ প্ৰতি পাঠকৰ আকৰ্ষণ বঢ়াই তোলে। ইয়াৰ মূলতে হৈছে প্ৰশ্নবাচক বাক্য শৈলী। কিয়নো গল্পকাৰে প্ৰশ্নবোৰ উত্থাপন কৰি উত্তৰ দিয়া নাই। তাৰ পৰিৱৰ্তে পাঠকক গল্পৰ পৰৱৰ্তী অংশৰ পঠনেৰে নিজে জানি ল'বলৈ দিছে।

লেখেৰি নিছিগাকৈ কৰ্ত্তাবিহীন বাক্যৰে কথন অব্যাহত ৰখাটোও দেৱব্ৰত দাসৰ বৰ্ণনাশৈলীৰ বিশেষত্ব। কেতিয়াবা গল্পৰ আৰম্ভণিয়েই তেনে বাক্যৰে কৰিছে। 'পংকিলতাৰ এদিন' গল্পটোৰ আৰম্ভণি অংশ মন কৰক–

"সাৰ পায়েই দেখিলোঁ ৰ'দ ওলাইছে। যোৱা ৰাতি বৰষুণজাকৰ পিছত ৰাতিপুৱা বেলিৰ কোমল ৰ'দ। উঠি গৈ খিৰিকীখন খুলি দিলোঁ। পৰ্দাখন খুপাই থ'লো। মুখ-হাত নোধোৱাকৈ বাহিৰলৈ ওলাই গ'লোঁ... বৰ্ষাসিক্ত সেউজীয়া ঘাঁহৰ ওপৰেৰে খোজকাঢ়ি গৈ সেই ঠাইখিনি ওলালোগৈ। দেখিলোঁ অ'ত ত'ত ভেন্দিৰ গুটিবোৰে গজালি মেলিছে।"

মন কৰক, ইয়াৰ এটা বাক্যতো কৰ্ত্তাৰ উল্লেখ নাই। ক্ৰিয়াৰপৰাই কৰ্ত্তাৰ ধাৰণা কৰি ল'ব পাৰে। সেইবুলি কথন-বৰ্ণন খহটাও নহয়। মসৃণতা আছে। এনে কৰ্ত্তাবিহীন বাক্য তেওঁৰ বহু গল্পতে আছে।

ক্ৰিয়াবিহীন বাক্যৰ পয়োভৰেও দেৱব্ৰত দাসৰ বৰ্ণনাত চুম্বকত্ব আৰোপ কৰিছে। চুটি চুটি ক্ৰিয়াবিহীন বাক্যৰে সজা একোটা অনুচ্ছেদে গল্প একোটাৰ কথনক, সামগ্ৰিক বৰ্ণনাৰ সৌন্দৰ্য বঢ়াই তুলিছে। 'চাৰিটা চিৰিৰ এন্ধাৰ' গল্পৰ প্ৰথম অনুচ্ছেদটো চাওকচোনঃ

''বসন্তৰ দিন তেতিয়াও শেষ হোৱা নাই, তেতিয়াও অ'ত ত'ত ৰঙৰ ছাপা কৃষ্ণচূড়াত, ঘাঁহত, সোণাৰু, পলাশৰ ডালে ডালে অথবা ক্ষণে ক্ষণে মেঘৰ সাজ সলোৱা নীলা আকাশখনত। পাহাৰীয়া মাটিত একাষৰীয়া বাটটো নিৰ্জন

তেতিয়া। এনেয়েও কাৰখানাৰ পিছপিনৰ এই আলিটোত যানবাহন অথবা জনসমাগম সততে কম। সিপিনৰ বিলখনত মাটি পেলাই এটা এটাকৈ নতুন নতুন ঘৰ উঠি আছে। তথাপি মাজে মাজে মেটেকা দেখা যায়।"

এই অনুচ্ছেদটো পঢ়ি চালে অনুভৱ কৰা যায়- ইয়াৰ মাজৰ ক্রিয়াবিহীন বাক্যকেইটাই অনুচ্ছেদটোৰ পঠনক সুষমামণ্ডিত কৰি তুলিছে। আন এটা উদাহৰণ মন কৰক, য'ত অনুচ্ছেদৰ প্রথম দুটা আৰু শেষৰ বাক্যটো ক্রিয়াযুক্ত, বাকীবোৰ বাক্য ক্রিয়াবিহীন অথচ অনুচ্ছেদটোৰ সৌন্দর্য সমাহিত হৈ আছে সেই বাক্যকেইটাতে।

যেনেঃ

''ইতিমধ্যেই ড্রাইভাৰে আবে' কি কৰ? কি কৰ?'বুলি চিটিবাছখন ব্রেক মাৰি ৰখালে আৰুহেণ্ডেলডাল তুলি লোৱাৰ পৰা খগেনক বাধা দিলে। নয়নে ছিগাৰেটটো দলিয়াই কি ঘটিছে নঘটিছে বুজ ল'বলৈ চেষ্টা কৰিলে। দুটা দল। এপিনে ৰুক্মিণী খগেনহঁত। আনপিনে ভড়ালী বাবু। 'ভদ্রতা'ৰ ইপাৰে সিপাৰে দুটা দল। ইপাৰে এজন ঘোচখৰ আমোলা। আনপিনে এজনী বেশ্যা আৰু তাইক সহায় কৰোতা হেণ্ডিমেন-কণ্ডাক্টৰ। মাজত এতিয়া নয়ন, বেকাৰ ডেকা এজন, সমাজৰ অদৰকাৰী জীৱ। নয়ন এতিয়া কাৰ ফলীয়া হ'ব?''

'সীমাৰ ইপাৰে সিপাৰে' গল্পটোৰ এই অনুচ্ছেদটিত কাজিয়ামুখৰ পৰিস্থিতি এটিক তুলি ধৰা হৈছে। স্বভাৱতে তাত নাটকীয়তা আছে, সেই নাটকীয়তাক আৰু বৃদ্ধি হোৱাত সহায় কৰিছে ক্রিয়াবিহীন বাক্যকেইটাই। দৰাচলতে পাঠকক খণ্ড খণ্ডকৈ ঘটনা বা কাহিনী কোৱা ধৰণটোৰ বাবেই দেৱব্রত দাসৰ গল্পত নাটকীয়তা আছে আৰু সেই নাটকীয়তা বহুসময়ত অধিক ৰসঘন হৈ পৰিছে কর্ত্তাবিহীন আৰু ক্রিয়াবিহীন বাক্যবোৰৰ বাবে। এককথাত, গল্পকাৰগৰাকীৰ গল্পৰ বিষয়বস্তুৱে পাঠকৰ মনত যিদৰে হেন্দোলনি তোলে, সেই বিষয়ৰ কথন ৰীতিয়েও পাঠকক সমানেই মোহিত কৰে।

যোগাযোগৰ ঠিকনা –

সহযোগী অধ্যাপক, অসমীয়া বিভাগ

গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়

dipamani@gauhati.ac.in

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোং দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জুন, 2024

সাহিত্যত অভিযোজনঃ এটি ধাৰণাগত বিশ্লেষণ

ড০ অনামিকা ৰাজবংশী

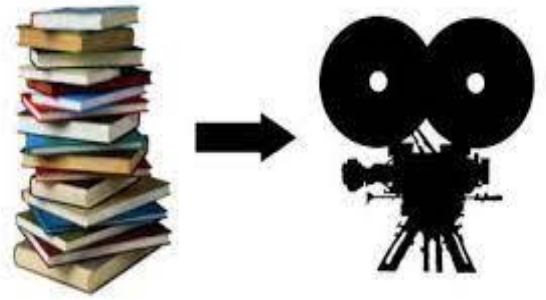

অভিযোজন হ'ল লিখিত পাঠ এটিক দৃশ্য-শ্রব্য বা অন্য পাঠলৈ লৈ যোৱা বা নতুনকৈ উপস্থাপন কৰা। সাহিত্যিক অভিযোজনে কোনো সাহিত্যিক বিধা যেনে- উপন্যাস, চুটিগল্প, কবিতা আদিক আন এটা মাধ্যম, যেনে-ছবি, চলচ্চিত্র, মঞ্চ নাটক আদিৰ যোগেদি নতুনকৈ প্রকাশৰ সুযোগ দিয়ে। Linda Hutshonয়ে 'Adaptation theory' সম্পর্কত উল্লেখ কৰিছে এইদৰে– 'repetition, but repetition without replication.' অর্থাৎ- পুনৰাবৃত্তি, কিন্তু প্রতিলিপি নোহোৱাকৈ কৰা পুনৰাবৃত্তি। প্রতি মুহূর্ততেই আমি কিবা নহয় কিবা এটা ৰূপক আন এটা ৰূপলৈ ৰূপান্তৰ কৰোঁ। যেনে-চকুৰে দেখা দৃশ্য এটাক কবিতা, কবিতা এটাক কোনোবাই সুৰ দি কৰা গীত, উপন্যাস বা গল্প এটিক চলচ্চিত্র, মঞ্চত বা কেনভাছত ন ৰূপ দিয়া আদি কার্যবোৰ হ'ল অভিযোজন। সেয়ে অভিযোজন হ'ল-"নতুন অৱস্থাৰ সৈতে খাপ খুৱাবৰ অর্থে কৰা সালসলনি"। সাহিত্যিক অভিযোজনে এনেধৰণে কেইবাটাও মূল বৈশিষ্ট্য প্রদর্শন কৰে –

ক) মূল পাঠৰ ওপৰিঞ্চিভাৱে এক নতুন দৃষ্টিভংগী প্রদান কৰে। যিয়ে বিষয়বস্তু, চৰিত্র আৰু পৰিৱেশৰ ব্যাখ্যাত অনন্যভাৱে কার্য কৰে।

খ) নতুন মাধ্যমৰ লগত খাপ খুৱাই বা দর্শক-পাঠকৰ সৈতে অনুৰণন ঘটাবলৈ চৰিত্রসমূহ সম্প্রসাৰিত বা পৰিৱর্তন কৰি তুলিব পাৰে।

গ) অভিযোজনত প্রায়ে দৃশ্যগত কাহিনী কোৱা কৌশল অন্তর্ভুক্ত কৰা হয়, পৰিৱেশ আৰু আৱেগ

সৃষ্টি কৰিবলৈ নান্দনিক উপাদানৰ সংযোগেদি এই ক্ষেত্রত চিনেমাট'গ্রাফী, শিল্প পৰিচালনা বা মঞ্চায়নৰ ব্যৱহাৰ কৰা হয়।

ঘ) অভিযোজনে মূলৰ পৰা নতুন মাধ্যম গ্ৰহণ কৰাৰ সময়ত সাধাৰণ উপাদানসমূহৰ সৈতে নতুন কিবা এটাৰ সংমিশ্ৰণ ঘটাব পাৰে, যেনে-নাটকীয় কাহিনীত হাস্যৰস অন্তৰ্ভুক্ত কৰা।

ঙ) সংক্ষিপ্তকৰণ বা বিশদতা প্ৰদানত অভিযোজনে গুৰুত্ব দিয়ে। সংক্ষিপ্ততাৰ বাবে অভিযোজনত দীঘলীয়া কাহিনীবোৰ সংক্ষিপ্ত কৰিব পাৰি আৰু আনহাতে বিষয়বস্তুৰ গভীৰতাৰ বাবে পাৰ্শ্ব কাহিনীক বিশদভাৱে ক'ব পাৰি।

-এই বৈশিষ্ট্যসমূহে অভিযোজনৰ সময়ত একক সহযোগিতাৰে এটি সুকীয়া কাৰ্য সিদ্ধি কৰে, যিয়ে মূল পাঠটোক নতুন ৰূপলৈ ৰূপান্তৰ কৰাৰ লগতে মূলৰ প্ৰতিও সন্মান প্ৰদৰ্শন কৰে। আকৌ, সাহিত্যিক অভিযোজনে নতুন মাধ্যম গ্ৰহণ কৰাৰ দিশত বিভিন্ন ৰূপ ল'ব পাৰে। যেনে-

ক) **চলচ্চিত্ৰ অভিযোজন:** ইয়াত উপন্যাস, নাটক বা কবিতাক চলচ্চিত্ৰলৈ ৰূপান্তৰিত কৰা হয়, প্ৰায়ে উৎস সামগ্ৰীৰ সংক্ষিপ্ত বা পুনৰ ব্যাখ্যা এনে দিশত যোগ বা বিয়োগ কৰা হয়।

খ) **নাট্য অভিযোজন:** ইয়াত সংলাপ আৰু পৰিবেশন উপাদানৰ ওপৰত বিশেষ গুৰুত্ব আৰোপ কৰি সাহিত্যিক ৰচনাক মঞ্চ নাটকলৈ ৰূপান্তৰ কৰা হয়।

গ) **টেলিভিছন অভিযোজন:** সাহিত্যিক ৰচনা এটিক কেতিয়াবা টেলিভিছনৰ ধাৰাবাহিকলৈ অভিযোজন কৰি তোলা দেখা যায়, যাৰ ফলত চৰিত্ৰ আৰু বিষয়বস্তুৰ প্ৰতি দৰ্শকে আনন্দ লাভ কৰাত সুবিধা হয়।

ঘ) **সংগীত অভিযোজন:** সাহিত্যিক ৰচনাৰ পৰা মিউজিকেল তৈয়াৰ কৰা, সংলাপ, সংগীত আৰু নৃত্যৰ সংমিশ্ৰণেৰে ইয়াত কাহিনীটো প্ৰকাশ কৰা হয়।

ঙ) **কাব্যিক অভিযোজনঃ** গদ্যৰ ৰচনাক কবিতা হিচাপে পুনৰ ব্যাখ্যা কৰা, কাব্যিক ৰূপৰ জৰিয়তে তাৰ সত্তাক ধৰি ৰখা।

তদুপৰি, অভিযোজন সম্পৰ্কীয় আলোচনাত অনুবাদ বিষয়টোও জড়িত হৈ আছে। কিয়নো অনুবাদে যিদৰে এটা ভাষাৰ পাঠক আন এটা ভাষাত প্ৰকাশ কৰাৰ লগতে মূল পাঠৰ সম্প্ৰসাৰণ বা পুণসৃষ্টিত সহায় কৰে। ঠিক সেইদৰে লিখিত পাঠ এটিক অভিযোজনে আন এটি মাধ্যমৰ সহায়ত নতুন ৰূপত উপস্থাপন কৰে। অৰ্থাৎ অভিযোজন অনুবাদৰে সমাৰ্থক শব্দস্বৰূপ। বহুসময়ত গল্প-উপন্যাসৰ আধাৰত নিৰ্মিত চিনেমা এখন চাই দৰ্শকে মন্তব্য দিয়া শুনা যায়, যে- চিনেমাখনতকৈ কিতাপখন পঢ়ি বেছি ভাল পাইছিলোঁ। এই কথাষাৰে অভিযোজনাক অনুবাদৰ ৰূপত প্ৰকাশ কৰে। যাৰ বাবে অভিযোজনক অনুবাদৰ এক প্ৰকাৰ বুলিব পাৰি। আচলতে,অভিযোজন মানেই কিবা এটা আকৌ কৰা বা নতুনকৈ কৰা, কিন্তু অনুবাদৰ নিচিনাকৈ লক্ষ্যপাঠটি উৎস পাঠৰ হুবহু ৰূপ নহয়। অনুবাদ সম্পৰ্কীয় আলোচনাত আমাৰ প্ৰথম কথাটিয়ে হ'ল যে ই সদায় মূলৰ প্ৰতি দায়বদ্ধ। কিন্তু, অভিযোজনত নতুন পাঠটি মূলৰ ওচৰত সদায় দায়বদ্ধ নহ'বও পাৰে। মনত ৰাখিব লাগিব যে, অভিযোজন মূলৰ প্ৰতিবিম্ব নহয়,প্ৰতিনিৰ্মাণহে। দৰাচলতে সাহিত্য অভিযোজন আৰু অনুবাদ দুয়োটাই এখন গ্ৰন্থৰ বা এটা পাঠৰ বা এটা ৰূপৰ পৰা আন এটা ৰূপলৈ ৰূপান্তৰিত কৰাৰ প্ৰক্ৰিয়া, কিন্তু ইয়াত সুকীয়া অনুশীলন জড়িত হৈ থাকে। দুয়োটাতে ৰূপান্তৰ জড়িত হৈ থাকে সচাঁ কিন্তু অভিযোজনত স্থান-কালৰ প্ৰসংগটি বিশেষভাৱে জড়িত। কাৰণ ই অনুবাদৰ নিচিনাকৈ নতুন সাজ

পৰিধান কৰিলেও সেই নতুন ৰূপটি নতুন পৰিৱেশৰ আহ্বান অনুসৰি অন্য ৰূপ লোৱাৰ ক্ষেত্রটো পক্ষপাতিত্ব লয়। সাহিত্যৰ অধ্যয়নত অনুবাদ আৰু অভিযোজন দুয়োটা প্রক্রিয়া একে যদিও ইয়াৰ পৰিসৰ, উদ্দেশ্য আৰু দৃষ্টিভংগীৰ পার্থক্য আছে। অনুবাদকসকলে লেখকৰ উদ্দেশ্য, সূক্ষ্মতা প্রকাশ কৰি মূলৰ প্রতি বিশ্বাসী হৈ এটা পাঠক বেলেগ ভাষাত বুজিব পৰা কৰি তোলা বা মূলৰ উদ্দেশ্যক ধৰি ৰাখে। কিন্তু তাৰ ঠাইত অভিযোজনাৰ লক্ষ্য হ'ল নতুন দর্শকৰ বাবে পাঠটোক অধিক সুলভ বা প্রাসংগিক কৰি তোলা বা বেলেগ মাধ্যম (যেনে, চলচ্চিত্র, থিয়েটাৰ বা টেলিভিছন)ৰ লগত খাপ খুৱাই লোৱা। অভিযোজন প্রক্রিয়াত নতুন প্রসংগৰ সৈতে মিলি যাবলৈ মূলক আন ভাষাত নিবিড়ভাৱে প্রতিফলিত কৰাৰ কঠোৰ নিষ্ঠাতকৈ সৃষ্টিশীলতা আৰু প্রাসংগিকতাৰ ওপৰত গুৰুত্ব দিয়া হয়। ফলত নতুন ৰচনাটি মূলৰ সৈতে সাদৃশ্য বহন কৰিলেও ইয়াৰ ৰূপ, শৈলী আৰু কেতিয়াবা আনকি ইয়াৰ বার্তাও সুকীয়া হৈ পৰে। অভিযোজনসমূহ উৎস সামগ্রীৰ সৈতে কিমান ঘনিষ্ঠভাৱে সংলগ্ন হয় তাৰ মাজত বহু পৰিমাণে ভিন্নতা থাকিব পাৰে। অভিযোজনৰ শেষ উৎপাদন হ'ল এটা নতুন ৰচনা যিটো মূলৰ পৰা যথেষ্ট পৃথক। অভিযোজনে অধিক সৃষ্টিশীলতা আৰু পৰিৱর্তনৰ অনুমতি দিয়ে। যেনে-উপন্যাস এখনক ছবিৰ লগত খাপ খুৱাই লোৱা, কাহিনীৰ পৰিৱেশ সলনি কৰা বা বেলেগ দর্শকৰ বাবে বিষয়বস্তুৰ পৰিৱর্তন কৰা আদি। ভাৰতীয় বিভিন্ন সাহিত্যৰ অভিযোজনৰ কেইটামান উল্লেখযোগ্য উদাহৰণ হ'ল- বিখ্যাত কবিতা হেম বৰুৱাৰ "মমতাৰ চিঠি"ৰো নাট্য ৰূপান্তৰণ, শৰৎ চন্দ্র চট্টোপাধ্যায়ৰ উপন্যাসৰ পৰা একাধিকবাৰ অভিযোজিত "দেৱদাস" চলচ্চিত্র, অমৃতা প্রীতমৰ পিংজৰ উপন্যাসৰ একে নামৰ চলচ্চিত্রৰ অভিযোজন আদি।

ভাৰতীয় প্রেক্ষাপটত সাহিত্য অভিযোজনে এক উল্লেখযোগ্য আৰু বহুমুখী ভূমিকা পালন কৰে। ই ভাৰতৰ চহকী সাহিত্য পৰম্পৰাক বিশেষকৈ চলচ্চিত্র নির্মাণ আৰু নাট্য সংস্কৃতিৰ সৈতে সেতুবন্ধন কৰে। যাৰ মূল কথা হ'ল সাহিত্যৰ সংৰক্ষণ আৰু জনপ্রিয়কৰণ। অভিযোজনে ভাৰতৰ বিশাল সাহিত্য ঐতিহ্য সংৰক্ষণ আৰু জনপ্রিয় কৰাত সহায় কৰে, যাৰ ফলত ধ্রুপদী আৰু সমসাময়িক ৰচনাসমূহ বহল দর্শকৰ মাজলৈ যায়। ছবি আৰু নাটকসমূহে প্রায়ে আঞ্চলিক ভাষাৰ ভিন্ন ৰচনাসমূহ অভিযোজিত কৰি ভাষিক বৈচিত্র্য অতিক্রম কৰি আঞ্চলিক সংস্কৃতিক প্রসাৰিত কৰে। বৈচিত্রময় সাংস্কৃতিক পৰিচয়ৰ সন্ধান আৰু দৃঢ়তা প্রদান কৰি প্রান্তীয় কণ্ঠ আৰু কাহিনীৰ বাবে ই এক মঞ্চ আগবঢ়ায়। সাহিত্যৰ বুজাবুজি আৰু প্রশংসা বৃদ্ধিৰ বাবে স্কুল আৰু কলেজৰ পাঠ্যক্রমত অভিযোজন অন্তর্ভুক্ত কৰাৰ লগে লগে সাংস্কৃতিক আৰু সামাজিক দিশত তাৰ গুৰুত্বও বৃদ্ধি পাইছে। অভিযোজনে ধ্রুপদী কাহিনীৰ সৃষ্টিশীল পুনৰ ব্যাখ্যা আৰু আধুনিক পুনৰ কোৱাৰ অনুমতি দিয়াৰ ফলত দর্শক-পাঠকে পৰম্পৰাগত আখ্যানক সমসাময়িক সংবেদনশীলতাৰ সৈতে মিলাই চাবলৈ যত্ন কৰে। আনকি, ই লেখক, চলচ্চিত্র নির্মাতা, নাট্যকাৰ, আৰু অন্যান্য শিল্পীৰ মাজত উদ্ভাৱনীমূলক আৰু সমৃদ্ধিশালী কলাত্মক প্রকাশভংগীৰ সৃষ্টিটো সহায়ক হয়।

সামগ্রিকভাৱে অভিযোজনৰ উপৰোক্ত দিশসমূহৰ গুৰুত্ব আছে যদিও অভিযোজনৰ সময়ত অভিযোজকজনৰ সন্মুখত কিছুমান প্রত্যাহ্বান আহি পৰে। সেয়ে তেওঁ প্রয়োজন অনুসৰি তেওঁ চৰম অত্যাচাৰীও হ'ব লগাত পৰিব পৰে। ডাক্তৰ এজনে যিদৰে অস্ত্রোপাচাৰ কৰিলে কেতিয়াবা মূলবস্তুটোৰ নির্যাস সংৰক্ষিত হয় আৰু কেতিয়াবা নহয়, তেনেদৰে অভিযোজনেও বহুসময়ত মূলৰ পৰা বহুদূৰ আঁতৰি যোৱাৰো প্রত্যাহ্বান আহি পৰে। সৃষ্টিশীলতাৰ অবাধ স্বাধীনতাৰ সৈতে উৎস সামগ্রীৰ প্রতি সেয়ে বিশ্বাসযোগ্যতাৰ ভাৰসাম্য ৰক্ষা নহ'ব পাৰে। এনে প্রত্যাহ্বানসমূহ আঁতৰাবলৈ হ'লে আমি কিছুমান দিশ বিবেচনা কৰা উচিত যেনে-

ক)**সাংস্কৃতিক সংবেদনশীলতা:** য'ত অভিযোজকজন সাংস্কৃতিক প্রসংগৰ প্রতি সংবেদনশীল হ'ব লাগিব আৰু ভুল বর্ণনা এৰাই চলিব লাগিব। কাৰণ যিটো পৰিৱেশলৈ অভিযোজিত হৈছে সেই পৰিৱেশৰ সৈতে একাকাৰ হ'ব পাৰিলেহে ই দর্শকৰ মন পৰশা হৈ উঠিব।

খ) আমি অভিযোজন এটাক কেনেকৈ চাম সেই দিশটিৰ প্রতি স্পষ্ট ভাৱ গ্রহণ কৰাটো অভিযোজকজনৰ বাবে অতি গুৰুত্বপূর্ণ। ইয়াৰ প্রথম কথাটিয়েই হ'ল- মূলবস্তুৰ কোনখিনি বা কিমানখিনি সমল তুলি লোৱা হৈছে সেই দিশৰ প্রতি গুৰুত্ব দিয়া। নাটক-গল্প-গান-কবিতা-চিনেমা যিয়েই নহওক কিয় কেৱল কাহিনীটোৱেই ইয়াৰ শেষ কথা নহয়। কেতিয়াবা তাৰ মূল কাহিনীভাগো গ্রহণ কৰিব পাৰি। কিন্তু কেতিয়াবা কাহিনীটোকেই সমূলঞ্চে বাদ দি তাৰ অংশ এটিও অভিযোজনৰ বাবে যথেষ্ঠ হৈ পৰিব পাৰে। মূলবস্তুৰ কথক, নির্মাতা, শিল্পীৰ কথাখিনিকে নতুন নির্মাতাই কিহৰ বাবে বাচি লৈছে বা কি নতুন ক'বৰ বাবে আধাৰ হিচাপে সেই মূলবস্তুটোক বাচি লৈছে তাৰ বিবেচনা কৰাটোও অভিযোজকে মন দিয়া উচিত। এনে বিবেচনাই অভিযোজনৰ কিছুমান সম্ভাৱনা আমাৰ সমুখত দাঙি ধৰি সাহিত্য অধ্যয়নত তাৰ গুৰুত্ব বিচাৰ কৰাত সহযোগ কৰে-

ক) **বিষয়বস্তুৰ অন্বেষণ :** অভিযোজিত ৰূপটিয়ে বিভিন্ন বিষয়বস্তুৰ ওপৰত আলোকপাত কৰিব পাৰে, যাৰ ফলত মূল ৰূপৰ চৰিত্র আৰু কাহিনীভাগ নতুন ৰূপটিৰ দ্বাৰা গভীৰ অন্বেষণ সহজে কৰিব পৰা যায়।

খ) **সৃষ্টিশীল ব্যাখ্যা:** অভিযোজনে নিশ্চিতভাৱে অভিযোজকজনৰ সৃষ্টিশীলতাক উৎসাহিত কৰে, কিয়নো শিল্পীসকলে মৌলিক কর্মৰ দ্বাৰা তাৰ পুনৰ ব্যাখ্যা কৰে, যাৰ ফলত প্রায়ে সৃষ্টিশীল নতুন সাহিত্য ৰচনাৰ দিশত ন ন কৌশল সৃষ্টি হয়।

গ) **সুলভতা:** অভিযোজিত পাঠটি বহল দর্শকৰ বাবে সুলভ হয়। বহুসময়ত পাঠক বা দর্শকৰ সাহিত্যিক কর্মৰ কোনো এটি বিধাৰ প্রতি অনীহা থাকিব পাৰে। কিন্তু আন এটি ৰূপত তেওঁ সেয়া সহজে উপলব্ধি কৰিব পাৰে, যেনে- কবিতা এটা পঢ়ি তাৰ মূল কথা পাঠকজনে অনুভৱ কৰিব নোৱাৰিলেও তাৰ নাট্য ৰূপটিৰ দ্বাৰা সহজে কথাবস্তু উপলব্ধি কৰিব পাৰে।

আকৌ, যিসকলে মূল পাঠৰ সৈতে ইতিমধ্যে পৰিচিত তেওঁলোকে নতুন ৰূপটি কেনে হ'ব তাক জনাৰ অনুসন্ধিৎসা থাকিব আৰু যিসকলে মূল পাঠৰ লগত অচিনাকি তেওঁলোকে সেই বিষয়বোৰ জনাৰ সুবিধা লাভ কৰে।

ঘ) **আন্তঃপাঠ্যতা:** অভিযোজনে মূল ৰচনা আৰু নতুন ৰূপটিৰ গঠনগত দিশত পার্থক্য থাকিলেও বহুলাংশে দুয়োটাৰ মাজত ইয়ে বুজাবুজি সমৃদ্ধ কৰে।

সামৰণিত ক'ব পাৰি যে অভিযোজনৰ ক্ষেত্ৰত সূক্ষ্ম পর্যবেক্ষণৰ অতিশয় আৱশ্যকীয়। সাহিত্যিক বহল দর্শকৰ সৈতে সংযোগ কৰি বিভিন্ন মাধ্যমৰ মাজেৰে প্ৰসাৰিত হোৱাত ই গুৰুত্বপূর্ণ ভূমিকা পালন কৰে। বর্তমান সময়ত চলচ্চিত্ৰৰ অভিযোজন সাহিত্যৰ এক গতিশীল আৰু অবিচ্ছেদ্য অংগ হৈ পৰিছে। ভিন্ন স্থান আৰু কাল অতিক্ৰম কৰি সাহিত্য পৰম্পৰাক সমৃদ্ধ কৰাৰ লগতে বিশ্বজনীন কৰি তোলাৰ দিশত অভিযোজন অতি প্ৰাংসগিক।

যোগাযোগৰ ঠিকনা –

সহকাৰী অধ্যাপক
অসমীয়া বিভাগ, গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়
rajbonshianamika@gmail.com

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোঁ দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জূন, 2024

ৰোমান্টিক অসমীয়া কবিতা বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱাৰ ‘হে জননী ভাৰতবর্ষ’

পাঞ্চুৰিকা শইকীয়া

পদ্য বা কবিতাৰেই (শ্লোক) সাহিত্য ৰচনাৰ আৰম্ভণি ঘটা ভাৰতীয় তথা অসমীয়া সাহিত্যত গদ্য সাহিত্যৰ উদ্ভৱৰ পাছতো কবিতাই এক পৃথক স্থান অধিকাৰ কৰি আছে। অসমীয়া সাহিত্যতো আজি পর্যন্ত মনৰ ভাৱ প্রকাশৰ বাবে কবিতা এক শক্তিশালী মাধ্যম। এই অসমীয়া কবিতালৈ (সাহিত্যলৈ) পশ্চিমীয়া ৰমন্যাসিক ভাবধাৰাৰ আগমণ *অৰুণোদই* আলোচনীৰ জৰিয়তে ঘটে যদিও *জোনাকী, বাঁহী, ঊষা* আদি আলোচনীত এই ভাবধাৰাই পৰিপূর্ণ ৰূপ লাভ কৰে । এই আলোচনী কেইখনৰ সমসাময়িকভাৱে কবিতা লিখিবলৈ আৰম্ভ কৰা কবিসকলৰ ভিতৰত বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱাও অন্যতম। তেজস্বী ভাষা আৰু সহজ ঘৰুৱা উপমাৰে গৌৰৱময় অতীতৰ কাহিনী সুঁৱৰি ভৱিষ্যতৰ পথিকক বাট দেখুওৱাৰ চেষ্টা কৰা এজন ৰোমান্টিক কবি বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱা। ভাৰতীয় ঐতিহ্যৰ ভেটিত ভৱিষ্যত নির্মাণৰ সপোন দেখা, প্রয়াস কৰা এটা কবিতা ‘হে জননী ভাৰতবর্ষ’। কবিৰ মনত অতীত আৰু ভৱিষ্যতৰ ভাৰতবর্ষক লৈ বর্তমানত (কবিৰ সময়ত) সৃষ্টি হোৱা দ্বিধা-সংশয় লগতে এখনি অগ্রগামী প্রগতিশীল ভাৰতবর্ষ গঢ় দিয়াৰ সপোন কবিতাটোৰ জৰিয়তে ফুটি উঠিছে।

বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱাৰ জীৱন আৰু সাহিত্য-কৃতি:

অসমীয়া কবিসকলৰ অন্যতম বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱাৰ ঘৰ যোৰহাট জিলাৰ টিয়কত। গুৱাহাটী আৰু কলিকতাৰ পৰা উচ্চ শিক্ষা লাভ কৰাৰ পাছত তেওঁ জাঁজী হাইস্কুলত শিক্ষকতা কৰি অৱসৰ গ্রহণ কৰে । বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱা (১৯২৮-২৯) অসম ছাত্র সন্মিলনৰ মুখপাত্র ‘মিলন’ৰ

সম্পাদকৰ দায়িত্বত থকাৰ উপৰিও 'বৰদৈচিলা' আলোচনী প্ৰকাশৰ ক্ষেত্ৰতো আগভাগ লৈছিল। তেখেতে অসমৰ গৌৰৱপূৰ্ণ কাহিনীৰে লিখি উলিয়াইছিল স্বদেশপ্ৰীতিমূলক কবিতাৰ পুথি *শংখধ্বনি* (১৯২৫), *প্ৰতিধ্বনি* (১৯৪০) আৰু *জয়ধ্বনি* (১৯৭৪)। বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাই *শৰাইঘাট* আৰু *পাৰ্থ সাৰথি* নামৰ গহীন নাটক আৰু *ৰাজস্থানৰ গল্প, মহাৰাজ নৰনাৰায়ণ, অসম গৌৰৱ* আৰু *ল'ৰাৰ বেজবৰুৱা* নামৰ শিশুৰ উপযোগী পুথি প্ৰকাশ কৰিছে। কেৰপাই শৰ্মা ছদ্মনামত 'বাঁহী' কাকতত খুহুতীয়া প্ৰবন্ধ লিখা বৰুৱাই কেইবাখনো প্ৰহসনো ৰচনা কৰিছে। তেখেতে কবিতাৰ বাহিৰেও সাহিত্যৰ অন্যান্য বিধা ৰচনাতো হাত দিছিল যদিও অসমীয়া লোকৰ মনত তেখেতৰ কবি পৰিচয়েহে স্থান লাভ কৰিবলৈ সক্ষম হৈছিল।

বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাৰ কবিতাৰ বিষয়বস্তু :

বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱা আছিল 'জোনাকী' আলোচনীয়ে কঢ়িয়াই অনা ৰমন্যাসিক ভাবধাৰাৰে পুষ্ট এজন কবি। বিংশ শতিকাত কবিতা লিখিবলৈ আৰম্ভ কৰা এইজন কবি পাশ্চাত্য ৰোমান্টিক আন্দোলনৰ দ্বাৰা প্ৰভাৱিত হৈছিল। সেয়ে তেখেতৰ কবিতাসমূহত ৰোমান্টিক সাহিত্যৰ লক্ষণ দেখা যায়। ৰোমান্টিক সাহিত্যৰ বিশেষত্বসমূহৰ ভিতৰত প্ৰকৃতি প্ৰীতি, কল্পনাৰ প্ৰাধান্য, প্ৰেম চেতনা, উদাৰনৈতিক মানৱতাবাদ আদি বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাৰ কবিতাত দেখা যায় যদিও তেখেতৰ কবিতাৰ মূল বৈশিষ্ট্যই হৈছে অতীত প্ৰীতি আৰু স্বদেশপ্ৰেম। উল্লেখযোগ্য যে অতীত প্ৰীতি তেখেতৰ স্বদেশ প্ৰেমৰ মূল কাৰক হৈ দেখা দিছে। অৰ্থাৎ অতীতৰ ঘটনা-পৰিঘটনা তথা ইতিহাসৰ বুকুত খোদিত প্ৰতিটো বিষয়েই কবিক মোহিত কৰিছিল। বিশেষকৈ বীৰ-বীৰাংগনাসকলৰ ত্যাগ আৰু কষ্টৰ বৰ্ণনাই কবিৰ মনতো জগাই তুলিছিল দেশপ্ৰেমৰ ফিৰিঙতি। তাতে সেই সময় আছিল স্বাধীনতা আন্দোলনৰ ভৰপক সময়। সেয়ে জনতাক উদ্বুদ্ধ কৰিবলৈ অতীত অসমৰ বীৰসকলৰ বীৰত্বৰ বৰ্ণনামূলক কবিতা ৰচনা কৰিছিল বুলি ভবাৰ থল আছে।

বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাৰ প্ৰায়বোৰ কবিতাই জাতীয়তাবাদী চিন্তা-চেতনাৰে উদ্বুদ্ধ। অসম আৰু অসমীয়াৰ জয়গান তেখেতৰ কবিতাৰ মূল বৈশিষ্ট্য। বিশেষকৈ অতীত অসমৰ গৌৰৱপূৰ্ণ বিষয়সমূহ লৈয়ে তেখেতে অধিকাংশ কবিতা ৰচনা কৰিছে। 'ৰঙামুৰা', 'নজনা বীৰৰ মূৰ' আদিৰ দৰে কবিতাত বিদেশীৰ বিৰুদ্ধে যুঁজি দেশৰ হকে প্ৰাণ দিয়া অসমৰ বীৰসকলৰ বৰ্ণনা কৰিছে। 'ৰংপুৰ', 'গড়গাঁও' আদিৰ দৰে কবিতাত আহোম ৰাজধানীৰ বৰ্ণনা কৰিছে। এইদৰে অসমৰ কীৰ্তিচিহ্ন, কোনো বীৰ বা ঠাই যেনে – 'শৰাইঘাট, জামুগুৰিহাট, আগীয়াঠুটিৰ বীৰ, ৰঙামুৰা বীৰ কবিৰ কবিতাৰ প্ৰধান উপজীব্য'।[১]

হে জননী ভাৰতবৰ্ষ : বিষয়বস্তু, প্ৰকাশভংগী আদিবোৰ দিশত থকা ধ্ৰুপদী সাহিত্যৰ দৃঢ় বন্ধন ছিঙি মুকলিলৈ ওলাই অহাৰ প্ৰয়াসতে ৰোমান্টিক সাহিত্য আন্দোলনৰ জন্ম। মূলতঃ জাৰ্মানী, ইংলেণ্ড আৰু ফ্ৰান্সত বিকাশ লাভ কৰা এই 'ৰোমান্টিক আন্দোলনটো হ'ল এটি সাহিত্যিক ঐতিহ্যৰ বিৰুদ্ধে বিদ্ৰোহ'।[২] অসমীয়া সাহিত্যলৈ এই ৰোমান্টিকতাৰ আগমণ ঘটে ইউৰোপৰ আন্দোলন আৰু বংগৰ নৱজাগৰণৰ মাজেৰে। ইংৰাজী ৰোমান্টিকতাৰ লক্ষণসমূহ অসমীয়া কবিতাৰ মাজতো নিজস্ব বৈশিষ্ট্যৰে

ফুটি উঠা দেখা যায়। বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱাও এজন ৰোমান্টিক পৰম্পৰাৰে কবি। গতিকে তেওঁৰ কবিতা ‘হে জননী ভাৰতবর্ষ’ও এটা ৰোমান্টিক স্বদেশপ্রেমৰ কবিতা।

‘হে জননী ভাৰতবর্ষ’ কবিতাটোত কবিয়ে জন্মভূমি, কর্মভূমি, তীর্থভূমি ভাৰতবর্ষৰ প্রাকৃতিক সৌন্দর্যৰ বর্ণনাৰ লগতে অনেক বৈচিত্র্যৰ মাজত থকা ঐক্যৰ নিদর্শন দাঙি ধৰিছে। কবিৰ ভাষাত –

‘মহাগিৰি মহাসিন্ধু দুয়ো একেলগে
সাবটি ধৰিছে যাৰ সুন্দৰ শৰীৰ,
পৃথিৱীৰ সৰু এটি পুণ্য তাঙৰণ
অনৈক্যৰ মাজে ঐক্য দিব্য নিদর্শন। ’

এফালে সুউচ্চ পর্বতমালা, আনফালে সুগভীৰ সাগৰ – দুটা সম্পূর্ণ বিপৰীতমুখী ধাৰাই সাৱটি থকা ভাৰতবর্ষ দ্রাবিড়, অষ্ট্রিক, মংগোলীয়, আর্য, শক-যৱন আদি বিভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠী, ভাষা-ভাষী, ধর্মৰ লোকৰ বসতিস্থল। ভিন্ন ভাষা, ভিন্ন সাংস্কৃতিক পৰম্পৰাৰ হ’লেও একে জ্ঞান, একে প্রাণ আৰু একে ধ্যানেৰে সকলো একে ভাৰতমাতৃৰে সন্তান। সহোদৰৰ মাজত থকা পার্থক্যৰ দৰে এই ৰাজ্যসমূহো নিজস্ব বৈশিষ্ট্যৰে পৃথক। তথাপি কিন্তু সকলোৰে ‘জিৰণিৰ কোলা’ এই ভাৰতবর্ষই । এয়াই ভাৰতবর্ষৰ মূল বিশেষত্ব, নিজস্ব পৰিচয়। অনৈক্যৰ মাজত দেখা পোৱা এই একতাই ভাৰতবর্ষক পৃথিৱীৰ আন ৰাষ্ট্রৰ তুলনাত একক আৰু অনন্য কৰি তুলিছে। তথাপিও কিন্তু কবিৰ মনৰ পৰা সংশয়ৰ কলীয়া ডাৱৰ একেবাৰে আঁতৰি যোৱা নাই। সেয়ে তেওঁ কৈছে –

‘কালত পাহৰি গ’লে আকৌ সুঁৰৰি চাই
একতাৰ গৌৰৱতে আগবাঢ়ি যায়’

ভাৰতবর্ষৰ মাজত যিদৰে একতা আছে, সেইদৰে বিচিত্রতাও আছে । ধর্ম, ভাষা, পৰম্পৰা আদিৰ ক্ষেত্রত বিচিত্রতা থকাৰ দৰে ঐতিহ্য, আদর্শবোধৰ একতা আছে ভাৰতবাসীৰ মনত।

‘হে জননী ভাৰতবর্ষ’ ভাৰতীয় ঐতিহ্যৰ পদাংক অনুকৰণেৰে ভৱিষ্যতৰ একক, শক্তিশালী, প্রগতিশীল ভাৰতবর্ষ গঢ়িব বিচৰা এক আশাবাদীৰ কবিতা । কবিয়ে কবিতাটোত ব্যৱহাৰ কৰা ভৱিষ্যত কালসূচক কিছুমান ক্রিয়া, যেনে – উঠিব, চাব, যাব, দিব আদিৰ জৰিয়তে কবিৰ মনৰ মাজত দেখা আশাৰ ৰেঙনিৰ আভাস পোৱা যায় । কবিৰ আশা অত্যাচাৰী দানৱে যদি ভাৰতমাতৃৰ অপমান কৰে, তেন্তে তেওঁৰ সকলো সন্তান (ৰাজ্য) একেলগ হৈ বিদেশীৰ বিৰুদ্ধে যুঁজ দিব –

‘তথাপিও পাশৱিক বলে বলীয়ান
পৃথিৱীৰ অত্যাচাৰী মানৱ দানৱে
আজি জননীক যদি কৰে অপমান,

উঠিব সকলো জাগি ভাৰত সন্তান,
আচৰিত হৈ যাব জগতবাসীয়ে
মহামিলনৰ চিত্র মাতৃ পূজকৰ।’

কবিৰ সময় আছিল পৰাধীনতাৰ সময়। ব্রিটিছ শাসনৰ বিৰুদ্ধে জাগি উঠিছিল সমগ্র ভাৰতবাসী । এনে সময়তে কবিতা ৰচনা কৰা বিনন্দ চন্দ্র বৰুৱায়ো ‘পাশৱিক বলে বলীয়ান’, ‘অত্যাচাৰী মানৱ দানৱ’ আদি শব্দৰ দ্বাৰা নিশ্চয়কৈ ব্রিটিছসকলকে বুজাইছে । কাৰণ স্বেচ্ছাচাৰী ব্রিটিছ শাসকৰ বিৰুদ্ধে পোনপটীয়াকৈ বিৰোধিতা কৰাতো হয়তো সম্ভৱ নাছিল । যাৰ বাবে কবিয়ে এনেদৰে পৰোক্ষভাৱে জনতাক সজাগ কৰাৰ চেষ্টা কৰিছিল। তেওঁ

আশা কৰিছে এদিন ভাৰতবৰ্ষৰ বিভিন্ন ৰাজ্যৰ সকলো বীৰ সন্তানে একেলগে পৰম বিক্ৰমেৰে যুঁজি 'কৰিব ভাৰত ৰক্ষা অজাতিৰ পৰা'। কবিয়ে আশা কৰিছে এনে এখন জন্মভূমিৰ, য'ত সকলো জাতি-ধৰ্ম-বৰ্ণ-ভাষা নিৰ্বিশেষে একে মাতৃৰ সন্তানৰ দৰে একতাৰ বান্ধোনেৰে বান্ধ খাই থাকে। যদিও কবিয়ে জানে যে এয়া তেওঁৰ এক ৰোমান্টিক কল্পনা, বাস্তৱ ইয়াতকৈ বহুত বেছি সমস্যাজৰ্জৰ। তথাপিও কবিয়ে কৈছে –

'কাশ্মীৰৰ দুৰ্গতিত অসমে কান্দিব
মাৰাঠাৰ গৌৰৱত উৎকলে হাঁহিব
ৰাজস্থানে আগবাঢ়ি কাশ্মীৰ ৰাখিব
অসমৰ সীমান্তত শিখে দেখা দিব।'

এইখিনিৰ মাজেৰে এক ভাৰতীয়, এক জাতিৰ মনোভাৱ প্ৰকাশ পাইছে। ভাৰতৰ সকলো মানুহেই ইজনে সিজনৰ প্ৰতি দায়বদ্ধ আৰু গৌৰৱান্বিত।

এটা অঞ্চলত বহুবছৰ ধৰি বসবাস কৰি থকা জনসমষ্টিসমূহৰ মাজত এক উমৈহতীয়া সামাজিক-সাংস্কৃতিক-মানসিক সাঁচ

গঢ় লৈ উঠে। এই মিলনেই তেওঁলোকৰ মনত এক জাতীয় চেতনাৰ জন্ম দিয়ে। আশা-আকাংক্ষা, আৱেগ আদি জাতীয় চেতনাসমূহে যেতিয়াই মতাদৰ্শৰ ৰূপ লয়, তেতিয়াই জাতীয়তাবাদৰ জন্ম হয়। অসমীয়া জাতীয়তাবাদ মূলতঃ ভাষিক জাতীয়তাবাদ। কাৰণ অসমত বসবাস কৰা জনগোষ্ঠীসমূহৰ মাজত এক মত বিনিময়ৰ অৰ্থে জন্ম হোৱা অসমীয়া ভাষাটোৱে পৰৱৰ্তী সময়ত সাহিত্য, গীত-মাত, শিক্ষা আদিৰ মাধ্যম হিচাপে স্বীকৃত হৈ বৰ্তমান অসমীয়াৰ আবেগ হৈ পৰিছে। অৱশ্যে সাম্প্ৰতিক সময়ত উমৈহতীয়া নৃ-গোষ্ঠীগত চিনাকিয়ে নৃ-গোষ্ঠীভিত্তিক জাতীয়তাবাদ (Ethnic Nationalism) আৰু উমৈহতীয়া ধৰ্মীয় চিনাকিয়ে ধৰ্মভিত্তিক জাতীয়তাবাদৰো(Theocratic Nationalism) গঢ় দিয়ে। উল্লেখযোগ্য যে যদিও জাতীয় সমল, জাতীয় চেতনা আদিবোৰৰ পৰাই জাতীয়তাবাদৰ জন্ম হয়, তথাপি ইয়াৰ বাবে বা কোনো এটা ধাৰণা গঢ় দিয়াৰ বাবে বাহকৰো প্ৰয়োজন হয়। অৰ্থাৎ কোনো এটা জাতিৰ ভাষা-সংস্কৃতি, পৰম্পৰা আদিক যেতিয়া আদৰ্শৰ বাহক হিচাপে ধৰা হয়, তেতিয়াই জাতীয়তাবাদৰ উন্মেষ ঘটে।

'হে জননী ভাৰতবৰ্ষ' কবিতাটোত প্ৰকাশ পোৱা আন এটি দিশ হ'ল মানৱতাবাদৰ প্ৰকাশ। চন্দ্ৰকুমাৰ আগৰৱালাই 'মানুহেই দেৱ, মানুহেই সেৱ, মানুহেই পৰাৎপৰ' বুলি কোৱাৰ দৰে কবিয়েও কৈছে –

'মানুহেই পৃথিৱীৰ গৌৰৱৰ খনি
মানুহৰ অবিহনে পৃথিৱী কিহৰা।'

ইয়াৰ মাজেৰে কবিয়ে মানুহ যে অপৰিমেয় শক্তিৰ আধাৰ, মানুহেই সভ্যতা নিৰ্মাণ কৰি পৃথিৱীখন সুন্দৰ কৰি ৰাখিছে সেই কথাও প্ৰকাশ কৰিছে। মানৱ সভ্যতাৰ বাবেই পৃথিৱীৰ গৌৰৱ বৃদ্ধি হোৱা বুলি কবিয়েও ভাবিছে। লগতে কবিয়ে এইবুলিও কৈছে যে –

'সেয়েহে ভাৰতে আজি সাৰটিব খোজে
মানুহৰ মিত্ৰৰূপে সকলো মানুহ।'

কবিৰ মানুহৰ প্ৰতি থকা এই প্ৰেমে অসম, ভাৰত তথা সমগ্ৰ বিশ্বকে আকোঁৱালি লৈছে। কবি সংকীৰ্ণ জাতীয়তাবাদৰ পৰা মুক্ত হৈ বিশ্বপ্ৰেমৰ দিশলৈ ধাৱমান

হৈছে। সেয়ে তেখেতে যিদৰে ৰণজিৎ সিংহ, শিৱাজী, মহাৰাণা প্ৰতাপ বা অসমৰ লাচিত বৰফুকনৰ প্ৰশংসা কৰিছে; সেইদৰে বংগৰ নৱাব বীৰ চিৰাজুদৌল্লাৰো প্ৰশংসা কৰিছে । উল্লেখযোগ্য যে চিৰাজুদৌল্লাই সেনাপতি মীৰজাফৰৰ বিশ্বাসঘাটকতাৰ বাবে পলাশীৰ যুদ্ধত মৃত্যুবৰণ কৰে। তেখেতৰ মৃত্যুৰ পাছতহে বংগ ব্ৰিটিছ ইষ্ট ইণ্ডিয়া কোম্পানীৰ হাতলৈ যায়। যি কি নহওক, ৰমন্যাসিক যুগৰ এটি কবিতা হিচাপে সকলো মানুহকে জাতি-ধৰ্ম-ভাষা নিৰ্বিশেষে সমান দৃষ্টিৰে চোৱা দেখা গৈছে । অৱশ্যে কল্পনাৰ প্ৰাধান্যই বাস্তৱৰ সমস্যাজৰ্জৰ ছবিখন ফুটাই তোলাত অসমৰ্থ হৈছে। যদিও সাংস্কৃতিক ক্ষেত্ৰত, আদৰ্শবোধৰ দিশত বিভিন্নতাৰ মাজতো ভাৰতবৰ্ষ সদায় ঐক্যবদ্ধ আছিল, ভৌগোলিক ক্ষেত্ৰত ভাৰতবৰ্ষ কেতিয়াও এক নাছিল । ৰামায়ণ-মহাভাৰতৰ দিনৰ পৰা আজি একবিংশ শতিকাৰ তৃতীয় দশক পৰ্যন্ত ভাৰতবৰ্ষৰ এই ভৌগোলিক বাদ-বিবাদ চলি আছে। তথাপি সনাতনী আদৰ্শবোধে এক কৰি ৰখা ভাৰতবাসীৰ মাজত এক জাতীয়তাবোধৰ চেতনাও আছে । যাৰ বাবে কবিৰ মানসপটত ভাৰতবৰ্ষ সমস্যাহীন হৈ এক অদ্বিতীয় ৰূপত ফুটি উঠিছে।

এটি স্বদেশ প্ৰেমমূলক ৰমন্যাসিক কবিতা ‘হে জননী ভাৰতবৰ্ষ’ত কবি বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাই বৈচিত্ৰ্যৰে ভৰা ভাৰতবৰ্ষক ‘জননী’ বুলি সম্বোধন কৰিছে। ইয়াত কবিয়ে সকলোৰে পৰিচিত থলুৱা শব্দ ‘মা’ বা ‘আই’ ব্যৱহাৰ কৰা নাই, যদিও সহজ-সৰল আৰু থলুৱা শব্দৰ প্ৰয়োগ কৰাটো কবিৰ কবিতাৰ এটা মূল বৈশিষ্ট্য । ইমানদিনে অসমক মাতৃজ্ঞান কৰি অহা অসমীয়া লোকৰ বাবে হঠাতে ভাৰতবৰ্ষৰ ক্ষেত্ৰত মা বা আই শব্দটো মানি ল’বলৈ কিছু অসুবিধা হোৱাতো স্বাভাৱিক। সেয়ে কবিয়ে কবিতাটোত মা বা আইৰ সমাৰ্থক শব্দ ‘জননী’ ব্যৱহাৰ কৰিছে। কবিয়ে কবিতাটোৰ জৰিয়তে ভাৰতবৰ্ষক আহ্বান জনাইছে বা প্ৰাৰ্থনা কৰিছে যে কবিতাটোৰ জৰিয়তে অংকন কৰা ‘বসুধাৰ সবৰ্শ্ৰেষ্ঠ তীৰ্থৰূপে’ ভাৰতবৰ্ষক গঢ়ি তোলাৰ ক্ষেত্ৰত ভাৰতবাসীৰ মনত যেন সুমতি দিয়ে। কবিতাটোৰ নামকৰণৰ তাৎপৰ্যও এয়াই । গতিকে, ক’ব পাৰি বিনন্দ চন্দ্ৰ বৰুৱাৰ ‘হে জননী ভাৰতবৰ্ষ’ নিঃসন্দেহে এটা সাৰ্থক অসমীয়া ৰোমান্টিক কবিতা।

প্ৰসঙ্গ সূচী :

১. তালুকদাৰ নন্দ। *কবি আৰু কবিতা*।

পৃ. ১৭১।

২. শৰ্মা বসন্ত কুমাৰ। *ৰমন্যাসবাদৰ পটভূমি*। পৃ. ৯৭।

সহায়ক গ্ৰন্থপঞ্জী :

তালুকদাৰ নন্দ। *কবি আৰু কবিতা*। বনলতা, পৰিবৰ্দ্ধিত সংস্কৰণ : জানুৱাৰী – ২০০৬।

শৰ্মা সত্যেন্দ্ৰনাথ। *অসমীয়া সাহিত্যৰ সমীক্ষাত্মক ইতিবৃত্ত*। সৌমাৰ প্ৰকাশ, দশম সংস্কৰণ পুনৰ মুদ্ৰণ - ২০১৩ জুন।

শৰ্মা বসন্ত কুমাৰ । *ৰমন্যাসবাদৰ পটভূমি* । জাৰ্ণাল এম্প’ৰিয়াম, প্ৰথম প্ৰকাশ ৬১তম সৰ্থেবাৰী অধিৱেশন, অসম সাহিত্য সভা ১৯৯৫।

শৰ্মা হেমন্ত কুমাৰ। *অসমীয়া সাহিত্যত দৃষ্টিপাত*। বীণা লাইব্ৰেৰী, দ্বাদশ সংস্কৰণ - আগষ্ট ২০১০।

হাজৰিকা কৰবী ডেকা। *কবিতাৰ ৰূপছায়া*। বনলতা, তৃতীয় সংস্কৰণ - নৱেম্বৰ, ২০০৩ চন।

হাজৰিকা কৰবী ডেকা। *অসমীয়া কবিতা*। বনলতা, চতুর্থ সংস্কৰণ - ছেপ্তেম্বৰ, ২০১২ চন।

যোগাযোগৰ ঠিকনা –

গৱেষক, অসমীয়া বিভাগ,গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়

panchurikab2017@gmail.com

लौहित्य साहित्य सेतु: सहयोगी विद्वानों द्वारा पुनरीक्षित द्विभाषिक ई-पत्रिका

वर्ष: 5, अंक: 8; जनवरी-जून, 2024

শুকলতি : অসমৰ পৰম্পৰাগত ঔষধি গছৰ মূল্যৱান নিদৰ্শন

ভাস্বতী কাশ্যপ

শুকলতি (***Pogostemon benghalensis***) হৈছে এটি মূল্যৱান ঔষধি গছ, যি অসমৰ পৰম্পৰাগত ঔষধ প্ৰণালীসমূহত বহুলভাবে ব্যৱহৃত হৈ আহিছে। স্থানীয়ভাৱে "শুকলতি" নামেৰে জনাজাত, এইবিধ উদ্ভিদ বিভিন্ন ৰোগ নিৰাময়ৰ ক্ষমতাৰ বাবে অসমীয়া জনসমাজত বিশেষভাৱে সমাদৃত। শুকলতিৰ বহু ধৰণৰ ঔষধি গুণৰ বাবে ইয়াক ভাৰতীয় আয়ুৰ্বেদিক চিকিৎসা প্ৰণালীটো এক গুৰুত্বপূৰ্ণ স্থান দিয়া হৈছে। ইয়াৰ পাত সৰু আৰু ডিম্বাকৃতিৰ, ফুল বেগুনীয়া আৰু মূল ডাঠ তথা শাখাযুক্ত। গছৰ বৃদ্ধি প্ৰায় ১-২ মিটাৰ উচ্চতালৈ হ'ব পাৰে। ই অসমৰ উষ্ণ আৰু আৰ্দ্ৰ জলবায়ুত অতি সহজে বৃদ্ধি পায় আৰু সাধাৰণতে বনাঞ্চল আৰু পথৰ কাষৰ মাটিত পোৱা যায়। শুকলতিৰ পৰম্পৰাগত আৰু বৈজ্ঞানিক গৱেষণাৰ সমন্বয়ে ইয়াৰ ঔষধি গুণক প্ৰমাণিত কৰিছে, যাৰ ফলত ইয়াক এক মূল্যৱান ঔষধি গছ হিচাপে গণ্য কৰা হয়। অসমীয়া জনসমাজত শুকলতিৰ পৰম্পৰাগত ব্যৱহাৰ প্ৰাচীন কালৰ পৰা চলি আহিছে। ইয়াৰ প্ৰধান স্বাস্থ্যকৰ উপকাৰিতা সমূহ হ'ল-

শুকলতিৰ পাতৰ ৰসত প্ৰচুৰ পৰিমাণে আঘাতৰ উপশমজনক আৰু বিজাণুবিধ্বংসী গুণ থাকে। সেয়ে আঘাতৰ স্থানত শুকলতিৰ ৰস প্ৰয়োগ কৰিলে আঘাত সোনকালে শুকায় আৰু সংক্ৰমণ ৰোধ হয়। আঘাতৰ স্থলত শুকলতিৰ মিশ্ৰণ লগালে ফুলি উঠা ঠাইখিনিৰ বিষ লাঘৱ হয় আৰু আঘাত হোৱা কোষবোৰ সোনকালে পুনৰুজ্জীৱিত হয়। শুকলতিৰ পাতৰ পৰা নিষ্কাশিত বীজাণুমুক্ত গুণে

অন্যান্য বাতৰোগৰ চিকিৎসাটো সহায়ক। বিশেষকৈ পেশীৰ বেদনা উপশমত ই সহায়ক। ইয়াৰ উপৰিও, তাৰ ৰসে আঘাতৰ স্থানত শীতলতা প্ৰদান কৰে আৰু আঘাত সংক্ৰমণৰ পৰা সুৰক্ষিত ৰাখে।

প্ৰসৱৰ পাছত মহিলা গৰাকীৰ শৰীৰৰ বেদনা উপশম, শক্তি পুনৰুদ্ধাৰ আৰু গৰ্ভাশয়ৰ সংকোচন প্ৰক্ৰিয়াত এইবিধ উদ্ভিদ সহায়ক বুলি বিশ্বাস কৰা হয়। যাৰ বাবে তাৰ ৰস প্ৰসৱৰ কিছুদিন পাছত মহিলাগৰাকীক খাবলৈ দিয়া হয়, যিয়ে মহিলাৰ শৰীৰত শক্তি পুনৰুদ্ধাৰত সহায় কৰে । তদুপৰি, শুকলতিৰ উপশমজনক গুণে প্ৰসৱৰ পাছত হোৱা যন্ত্ৰণা কমায় আৰু মহিলাগৰাকীৰ শাৰীৰিক সুস্থতা ঘূৰাই অনাত আৱশ্যকীয় কাৰ্য কৰে। শুকলতিৰ antioxident গুণে শৰীৰৰ ৰোগ প্ৰতিৰোধ ক্ষমতা বৃদ্ধি কৰি স্বাস্থ্যৰ সুৰক্ষাত সহায় কৰে। এইদৰে, শুকলতি প্ৰসৱৰ পাছত মহিলাৰ আৰোগ্যৰ বাবে এক মূল্যৱান প্ৰাকৃতিক ঔষধ হিচাপে ব্যৱহৃত হয়। অসমত শুকলতিৰ পাত অতিজৰে পৰা পৰম্পৰাগতভাৱে ব্যৱহাৰ হৈ আছিল।

অসমৰ বাপতি সাহোন বিহু উৎসৱত বিশেষকৈ বহাগ বিহুত যি এশ-এবিধ শাক খোৱা হয়, তাৰ ভিতৰত এইবিধ শাক অন্যতম। ৰন্ধন শিল্পত শুকলতিৰ পাতৰ ব্যৱহাৰ বিভিন্ন ধৰণে কৰা হয়,যেনে- মাছৰ জোলত শুকলতিৰ ব্যৱহাৰ, পাত ভাজি, কেঁচা ৰস আদি । ইয়াৰ লগতে শুকলতিৰ গুল্ম আৰু সুশোভিত আকৃতিয়ে অলংকাৰী গছ হিচাপেও মানুহক সহজে আকৰ্ষিত কৰিবলৈ সক্ষম হয়। ই বাগিচাৰ সৌন্দৰ্য বৃদ্ধি কৰে আৰু জীৱবৈচিত্ৰ সুৰক্ষিত কৰি ৰাখে। এইদৰে ইয়াৰ বহুমুখী ঔষধি গুণ আৰু পৰম্পৰাগত ব্যৱহাৰ অসমীয়া সমাজ জীৱনৰ বাবে বৰ উপকাৰী। বৰ্তমানে এইবিধ গছৰ পৰম্পৰাগত ব্যৱহাৰ আৰু বৈজ্ঞানিক অধ্যয়নৰ সু-সমন্বয়ৰ ঘটোৱাৰ দিশত বিভিন্ন গৱেষনা কাৰ্যও চলি আছে। যিয়ে শুকলতিৰ ঔষধি ব্যৱহাৰৰ উদঘাটন আৰু প্ৰসাৰৰ সম্ভাৱনা বৃদ্ধি কৰিব। তদুপৰি, ইয়াৰ সংৰক্ষণ আৰু সঠিক ব্যৱহাৰে অসমীয়া পৰম্পৰাগত সমাজৰ লগতে সমগ্ৰ বিশ্বত ঔষধি গছৰ ঐতিহ্য সংৰক্ষণৰ নতুন বাট দেখুওৱাত সহায়ক হ'ব বুলি আশা কৰিব পাৰি।

যোগাযোগৰ ঠিকনা-

সহকাৰী অধ্যাপক,

ঔষধি বিজ্ঞান বিভাগ,

প্ৰাগজ্যোতিষপুৰ বিশ্ববিদ্যালয়,

bk26phr@gmail.com

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জূন, 2024

পাহাৰ

মূল (বাংলা) : নৱনীতা দেৱসেন

অনুবাদ : উৎপল ডেকা

কোনোৱে কওক বা নকওক তুমি সকলো জানা।

তথাপি ক'ৰবাত পাহাৰ আছে

সৰু কথা, ডাঙৰ কথা, সৰু দুঃখ, বৰ যাতনা

সকলো এৰি

বিশাল এখন হাঁহিৰ পাহাৰ।

এদিন

সেই পাহাৰত ঘৰ বান্ধিম তোমাৰ স'তে

মানুহে কওক বা নকওক, তুমি জানা।

যোগাযোগৰ ঠিকনা-

কবি, অনুবাদক

utpalkashyap123@gmail.com

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোং দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জূন, 2024

শিশুক শিশুৰ দৰে থাকিব দিয়া

মূল(চাওঁতালী) : যশোদা মূর্মূ

অনুবাদ : ঋষভ বশিষ্ঠ

শিশুক শিশুৰ দৰেই থাকিব দিয়া,

বাধা নিদিবা

ধূলি আৰু মাটিৰে আৱৰা, বাটবোৰত খেলিব দিয়া,

বাধা নিদিবা।

নথবা বান্ধি এওঁলোকৰ ভৰি,

খোজকাঢ়িবলৈ দিয়া,

পুখুৰীৰ মলিন পানীত সাঁতুৰিবলৈ

লালায়িত এওঁলোক !

খেলাতেই শিশুসকল মগন থাকে সদায়,

আৰু জীৱনৰ আনন্দক কৰে আলিংগন।

শিশুক শিশুৰ দৰেই থাকিব দিয়া,

বাধা নিদিবা।

যোগাযোগৰ ঠিকনা – ৮৭৬১০৬৩৪৭২

লৌহিত্য সাহিত্য সেতু: সহযোগী বিদ্বানোং দ্বারা পুনরীক্ষিত দ্বিভাষিক ই-পত্রিকা

বর্ষ: 5, অংক: 8; জনবরী-জুন, 2024

মানুহবোৰ অলিখিত কবিতা

মনালিছা শর্মা

অপ্রকাশিত প্রেমৰ দৰে

বহু কথাই বর্ণমালাহীন

তথাপি মানুহ পৃথিৱীৰ সনাতন কথক

মানুহবোৰ ভ্রমৰ বতাহত উৰি থকা চিলা

অথবা

সন্ধ্যাৰ অন্ধকাৰৰ ফালে ভাহি গৈ থকা

একোখন পালতৰা নাওঁ

বাহ্যিকতাত মানুহবোৰ একোটা প্রসাধনী কাহিনী

মুখ বাগৰি গৈ থাকে যি

মানুহবোৰ অসহজ জীৱনৰ বেথিক দস্তাৱেজ

নেপথ্যত যতনাই থয় যি

আইৰ নিচুকনি গীত

আৰু পিতাইৰ অনুশাসন

মানুহে স্মৃতিত সাঁচে

সপোনৰ আকাশত লেখি থকা অজস্র উল্কাচিহ্ন

অসংহত, অপস্মাৰ।

বহুবাৰ পৰাজিত হোৱাৰ পাছতো ভাঙি নোযোৱা মানুহবোৰ

শিলতকৈও কঠিন শোকৰ ভাস্কর্য্য

পানীয়ে উটুৱাব নোৱাৰে যি

জুইয়ে জ্বলাব নোৱাৰে যি

আচলতে এন্ধাৰত ডুবি থকা মানুহবোৰেই শিল্প

যি হৈ পৰে এদিন পোহৰৰ প্রস্তাৱনা

মানুহবোৰ

একোটা খালী পৃষ্ঠা

নাইবা একোটা অলিখিত কবিতা।

যোগাযোগৰ ঠিকনা - ৮০১১২০৩২১০